फरवरी 2004

मूल्य : सात रुपये

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

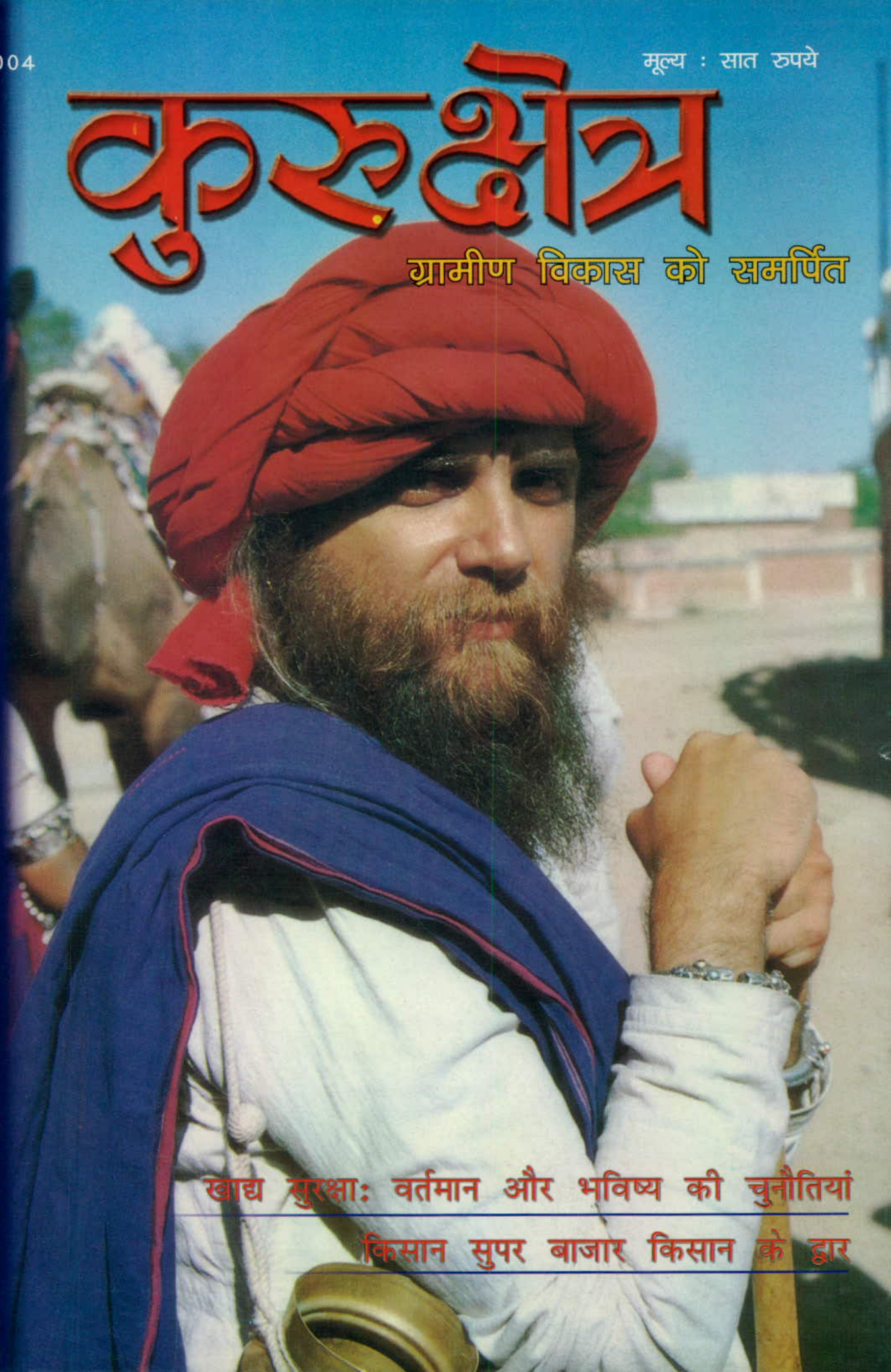

खाद्य सुरक्षा: वर्तमान और भविष्य की चुनौतियां

किसान सुपर बाजार किसान के द्वार

55वें गणतंत्र दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति का राष्ट्र के नाम संदेश : कुछ अंश

एक अरब आबादी के चेहरे पर मुस्कान हो

राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. कलाम ने 55वें गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर राष्ट्र के नाम अपने संदेश में कहा कि भारत को एक ऐसा राष्ट्र बनाना है जो पृथ्वी पर रहने के लिए सबसे सुंदर हो तथा जिसकी एक अरब आबादी के चेहरों पर मुस्कान हो। राष्ट्रपति ने सभी मतदाताओं से बिना किसी भय अथवा पक्षपात के मतदान करने की अपील की और युवाओं का आह्वान किया कि वे अपनी पढ़ाई को नजरअंदाज किए बिना खुद से सवाल करें कि वे समाज में क्या योगदान दे सकते हैं। उन्होंने कहा कि समाज के केवल तीन सदस्य हैं जो भ्रष्टाचार समाप्त कर सकते हैं, वे हैं माता, पिता और प्राइमरी स्कूल का शिक्षक। उन्होंने भ्रष्टाचार उन्मूलन की अपनी इस योजना को त्रिआयामी कार्ययोजना का नाम दिया। डा. कलाम ने युवा मतदाताओं से यह शपथ लेने को भी कहा कि वे धर्म, जाति और भाषा के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव का समर्थन नहीं करेंगे और वे खुद भी ईमानदार बनकर समाज को भ्रष्टाचारमुक्त बनाने का प्रयास करेंगे। उन्होंने भारत को एक प्रतिस्पर्द्धात्मक सुंदर राष्ट्र में बदलने की परिकल्पना को साकार करने के लिए दससूत्री रूपरेखा पेश की जिसमें मुख्य जोर गांव और शहर के अंतर को धीरे–धीरे कम करने और गरीबी, अशिक्षा, महिलाओं पर अत्याचार समाप्त कर एक ऐसा समाज बनाने पर दिया गया है जिसमें सभी मिलजुल कर रहें। इसमें समृद्ध, स्वस्थ, सुरक्षित, शांतिमय, खुशहाल तथा भ्रष्टाचारमुक्त भारत की परिकल्पना की गई है।

उन्होंने भारत की तेजी से विकास करती अर्थव्यवस्था का जिक्र करते हुए कहा कि अब ग्रामीण क्षेत्रों को भी शहरी सुविधाएं उपलब्ध करवाने और नदियों को जोड़ने जैसे विकास कार्यक्रमों के जरिए ये आर्थिक लाभ ग्रामीण जनसंख्या तक तेजी से पहुंचाने का समय आ गया है। साथ ही उन्होंने छोटे एवं मझोले उद्योगों और कृषि तथा खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों के विकास के अनुकूल बैंक की ब्याज दरें निर्धारित करने को कहा।

उन्होंने कहा कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने बहुत मजबूत और ठोस विकास का संकेत दिया है। दुनियाभर के अर्थशास्त्रियों की भविष्यवाणी है कि वर्ष 2020 तक विश्व का आर्थिक परिदृश्य पूरी तरह बदल जाएगा जिसमें भारत का गौरवशाली स्थान होगा। डा. कलाम ने वैज्ञानिकों से भी अपील की कि उन्हें अपनी प्रयोगशालाओं, मंत्रालयों और संस्थानों से बाहर निकलकर जनता से सीधे बातचीत कर उनकी जरूरतों के अनुरूप अनुसंधान करना चाहिए। उन्होंने वर्ष 2020 तक एक लाख मेगावाट की मौजूदा बिजली उत्पादन क्षमता को तिगुना करने के साथ ही गैर–पारंपरिक स्त्रोतों से भी बिजली उत्पादन की आवश्यकता पर जोर दिया।

दूसरी हरितक्रांति की जरूरत बताते हुए डा. कलाम ने कहा कि कृषि प्रौद्योगिकी को किसानों के अनुरूप बनाने के साथ ही खाद्य प्रसंस्करण तथा विपणन में उन्हें भागीदार बनाकर ऐसा कर पाना संभव है। इसके अलावा वर्ष 2020 तक प्रतिवर्ष लगभग 40 करोड़ टन उत्पादन बढ़ाना होगा। उन्होंने संविधान संशोधन के जरिए 5 से 14 वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा का अधिकार देने का स्वागत करते हुए कहा कि इसके बाद अब इलेक्ट्रानिक ज्ञान एवं दूर शिक्षा जैसी आधुनिक प्रौद्योगिकियों द्वारा बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान करने के लिए श्रेष्ठ अध्यापकों को नियुक्त करने तथा स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए तत्काल कार्रवाई की जरूरत है।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 50 ● अंक : 4

माघ–फाल्गुन 1925

फरवरी 2004

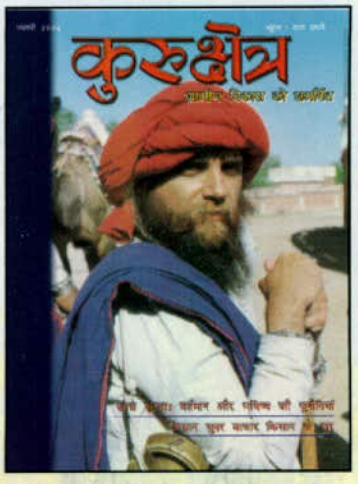

प्रधान संपादक
विश्वनाथ रामशेष
सहायक संपादक
ललिता खुराना
उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23015014,
फैक्स : 011–23015014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी
व्यापार व्यवस्थापक
जगदीश प्रसाद
आवरण
राहुल शर्मा
सज्जा
अजय भंडारी
आवरण फोटो : ओम मिश्रा

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

लेख

- खाद्य सुरक्षा : वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की चुनौतियां — योगेश बंधु आर्य — 7
- किसान सुपर बाजार : किसान के द्वार — भावना ठाकुर — 11
- कृषि क्षेत्र में नई संभावनाओं के द्वार खोलती पराजीवी फसलें — प्रदीप कुमार मुखर्जी — 14
- कृषि में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कितना सार्थक — जितेंद्र सिंह — 16
- कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से मंडराते खतरे — आर.वी.एस. गर्ग — 19
- भारत में व्यापारिक फसलें : एक सिंहावलोकन — डा. अनिल कुमार सिन्हा — 21
- पंचायत महायज्ञ में व्यवधान : नया संशोधन क्या कर पाएगा समाधान — वेद प्रकाश अरोड़ा — 25
- अश्वगंधा एक बहूपयोगी फसल — रत्नेश कुमार राव — 29
- ऊनी गलीचा उद्योग : मरुक्षेत्र बाड़मेर में अकाल का विकल्प — पी. आर. त्रिवेदी — 31
- विकलांगों के लिए स्वरोजगार की एक आसान आकर्षक योजना — कृष्ण कल्कि — 38

साहित्य

- समाधान (कहानी) — वेदप्रकाश अमिताभ — 34
- चार कविताएं — डा. राजेंद्र कुमार कनौजिया, — 37

सफलता की कहानी

- हार्टिकल्चर के क्षेत्र में अग्रसर नगालैंड — लीना — 42
- जनसहयोग से जावद अस्पताल का कायाकल्प — जगदीश मालवीय — 43

स्वास्थ्य चर्चा

- सही दिशा — डा. नीना कनौजिया — 44
- कब्ज की रामबाण औषधि इसबगोल — कैलाश जैन — 46
- डिप्रेशन : इलाज की दिशा में एक कदम — हर्षदेव — 47

पुस्तक चर्चा

- शब्द–संवाद : एक समीक्षा — डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर — 48

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में ए.के. दुग्गल, सहायक विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

प्रगति पथ पर अग्रसर

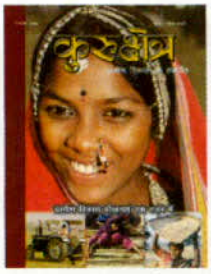

लोकप्रिय पत्रिका *कुरुक्षेत्र* का दिसंबर 03 अंक खरीदकर पढ़ा। आमुख आकर्षक है, कहानी शीर्षक 'ममत्व' तथा कविताएं विशेष रूप से पसंद आईं। अन्य रचनाएं भी ज्ञानवर्धक व महत्त्वपूर्ण हैं परंतु संपादकीय की प्रशंसा हेतु यथेष्ठ शब्द नहीं हैं। बहुत–बहुत बधाई व साधुवाद! कृपया लघुकथा भी प्रत्येक अंक में छापने का मानस बनाएं। *कुरुक्षेत्र* दिन–ब–दिन प्रगति पथ पर अग्रसर है, यह प्रसन्नता व संतोष का विषय है।

जय प्रकाश 'चंद्र'
905, अछनेरा,
जिला आगरा, उ.प्र.

संग्रहणीय अंक

2003 का अंतिम अंक वास्तव में संग्रहणीय है क्योंकि आपने इसमें भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित विभिन्न योजनाओं की बहुत ही सारगर्भित, तथ्यपरक एवं रोचक जानकारी विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत की है। आपका 'संपादकीय' भी अत्यंत उच्च कोटि का रहा। डा. विनोद कुमार सिन्हा की कहानी 'ममत्व' की जितनी प्रशंसा की जाए, वह कम ही है क्योंकि इस कहानी में सिन्हा जी ने आज के समाज की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत की है जो यथार्थता के धरातल पर बिल्कुल खरी उतरती है। आज हमारे समाज से 'वसुधेव कुटुंबकम्' की भावना दूर होती जा रही है। 'प्रशासन की जटा में उलझी हुई गंगा' वाक्य पूरी कहानी के सार को प्रस्तुत करता है। सिन्हा जी साधुवाद स्वीकार करें। नाटाणीजी द्वारा प्रस्तुत 'गरीबों का बादाम मूंगफली' से भी अच्छी जानकारी मिलती है।

दिलीप कुमार जायसवाल
ग्रा.–पो. चिरैयाकोट (बागदासी)
ज. मऊ (म.प्र.)

निष्ठा से कर्त्तव्य का निर्वहन

कुरुक्षेत्र का दिसंबर अंक आदि से अंत तक ज्ञानवर्द्धक लेखों से परिपूर्ण रहा। आज भी ग्रामीण लोग सरकार की योजनाओं से भलीभांति परिचित नहीं हो पाते हैं, ऐसा मैं गांव में रहकर शिद्दत से महसूस करती हूं। ऐसे में *कुरुक्षेत्र* ग्रामीण योजनाओं की जानकारी का प्रसार निष्ठा से कर रही है। आवश्यकता इस बात की है कि यह गांव में आसानी से सुलभ हो। मुझे एक शिकायत है कि गांव में टाइप की सुविधा उपलब्ध नहीं होती है इसलिए जब यह गांव उत्थान की पत्रिका है तो यह अनिवार्यता समाप्त की जानी चाहिए कि रचनाएं टाइप की हुई हों तभी सार्थक होगी पत्रिका की पहल अन्यथा हम जैसे बहुत से ग्रामीण अपनी रचनाएं पत्रिका को नहीं भेज सकेंगे। विश्वास है आप यह अनिवार्यता समाप्त करेंगे। *कुरुक्षेत्र* के इस बार के अंक का हरेक अंश मुझे पसंद आया। आज भी गांव में लोग साधारण नमक का प्रयोग करते हैं। उन्हें आयोडीन की कमी से होने वाली बीमारियों के बारे में नहीं पता पर इस लेख से उन्हें आयोडीन का महत्व पता चलेगा। *कुरुक्षेत्र* यूं ही ज्ञानवर्धक प्रगतिरूपी, विकासोन्मुख जानकारी सुलभ कराती रहे।

रेणुका 'अंशिता' श्रीवास्तव
बिशुनपुरा–गोरखपुर

मोहक आवरण ने मन मोहा

कुरुक्षेत्र दिसंबर 03 अंक के आवरण पृष्ठ ने मन मोह लिया, ग्रामीण विकास के प्रति अपनी सशक्त भूमिका का निर्वहन कर रही है *कुरुक्षेत्र* क्योंकि इस पत्रिका से ही ग्रामीण विकास योजनाओं की वृहद जानकारी सुलभ होती है अन्यथा ग्रामीण लोग अधिकतर इन योजनाओं के बारे में जान ही नहीं पाते। इस बार के अंक में 'ग्रामीणों और गरीबों हेतु नई योजनाएं' पर विस्तृत जानकारी ज्ञानवर्धक रही, गरीबों का बादाम मूंगफली पढ़कर सचमुच अच्छा लगा। आयोडीन की कमी पर जानकारी ग्रामीणों के लिए लाभप्रद होगी। ग्रामीण विकास योजनाओं पर लेख बहुत भाया है मन को। कहानी ममत्व पढ़कर मन खुश हुआ। कविताएं 'एक आशा है सूरज' और 'सुना है गांव में' के कवियों को बधाई।

संतोष 'अंश'
22/9 करैला बाग कालोनी,
इलाहाबाद–211003

ईमानदारीपूर्वक क्रियान्वयन जरूरी

ग्रामीण विकास योजनाओं पर आधारित *कुरुक्षेत्र* का दिसंबर अंक पढ़ा। आज देश में ग्रामीण जनता इसका कितना लाभ उठा पाती है अथवा किस हद तक यह उनके पास पहुंचता है, यहीं पर आकर प्रश्नचिन्ह लग जाता है। इन योजनाओं के ईमानदारीपूर्वक प्रबंधन के लिए ठोस उपाय करने की आवश्यकता है। हमेशा की तरह वर्तमान अंक का संपादकीय भी उत्कृष्ट है। उदारीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया में यदि संगठित व असंगठित क्षेत्र के मजदूरों का पूरा ख्याल रखा जाए तो विकास की गति में तीव्रता आएगी। लगभग पूर्णतः ग्रामीण राज्य नगालैंड को दिया गया पैकेज वहां रोजगार को बढ़ाने में सहायक होगा। पूर्वोत्तर राज्यों के लोगों को रोजगार के विशेष अवसर प्रदान करके उनके अंदर घर कर गई पृथकतावाद की भावना को कम किया जा सकता है क्योंकि सभी राज्यों का चहुंमुखी विकास ही भारत वर्ष का विकास है। हम सभी को क्षेत्रगत व संप्रदायगत भावना से ऊपर उठकर संपूर्ण राष्ट्र के निर्माण व विकास के बारे में सोचना चाहिए और व्यक्तिगत स्तर पर हम कहां तक सहभागी बन सकते हैं, इस पर विचार करना चाहिए।

प्रदीप कुमार गुप्ता
मध्यकालीन इतिहास विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद।

आने वाले अंकों से अधिक उम्मीद

वर्ष 2003 का अत्यंतिम अंक प्राप्त हुआ जिसमें कई महत्वपूर्ण व संग्रहणीय लेखों के साथ ही साथ उत्कृष्ट महत्ता प्रदत्त कहानी व कविताएं पढ़ने को मिलीं। वास्तव में यह मासिक पत्रिका अपने ग्रामीण विकास के समर्पण को सार्थक बना रही है। वर्ष 2003 के लगभग सभी अंक अपने आप में उत्कृष्ट रहे। आम पाठक अपने संपादक से आने वाले अंकों के प्रस्तुतीकरण में और भी नवीनता व उत्कृष्टता का संचार करने की आशा करते हैं।

सामान्य अर्थों में ममत्व का संबंध मातृत्व से जोड़ा जाता है। जिसमें मातृत्व नहीं जागा, उसमें ममत्व स्थान नहीं बना सकता। ममत्व कहानी की मां में मातृत्व का अभाव है। अगर मां का मातृत्व सजग रहता है तो वह अपने बच्चे के लिए सब कुछ त्याग कर सकती है। परंतु इस मां पर मातृत्व की बजाए वासना का प्रभाव अधिक है। वासना अल्पकालिक होती है मातृत्व दीर्घकालिक। फलतः वह वासना हेतु बच्चों सहित सभी कुछ त्यागने को तैयार लगती है।

इस कहानी में कमलेश्वर बाबू की पत्नी का 'ममत्व' मातृत्व से तथा कमलेश्वर का पितृत्व से ओतप्रोत है। फिर भी मातृत्व का ममत्व निश्चित ही पितृत्व के ममत्व से श्रेष्ठ होता है। इसे यह कहानी भले ही सुस्पष्टतः नहीं दर्शा पाती। इसका कारण 'ममत्व' की सत्ता को वृहदाकार या व्यापकत्व देना है।

कहानी के साथ–साथ कविता व पुस्तक चर्चा भी अच्छी लगी।

नीता तिवारी
एम.ए. (फाइनल), हिंदी विभाग,
इला. वि.वि., इलाहाबाद–211002

'ममत्व' की सही व्याख्या करती कहानी

वर्ष 2003 का अंतिम अंक यानी दिसंबर 03 का अंक ग्रामीण विकास योजनाओं पर एक दृष्टांकन प्रस्तुत करता है परंतु सरकार का दायित्व इन जनकल्याणकारी योजनाओं को शुरू करने तक ही सीमित नहीं रह जाना चाहिए, अपितु यह समीक्षा भी की जानी चाहिए कि जिनके लिए योजनाएं बनी हैं, उन तक इनके लाभ पहुंच रहे हैं या नहीं, एवं पहुंच भी रहे हैं तो किस हद तक। ये मात्र औपचारिकता तो नहीं रह गईं। इसमें व्याप्त भ्रष्टाचार से निजात पाने की कोशिश की जानी चाहिए। भ्रष्टाचार व जनसमस्या की अवहेलना ने ही हमारे लक्ष्यों को दुष्कर बना दिया है। जब तक इनसे निजात नहीं मिलती तब तक हमारे लिए समतामूलक विकास एक स्वप्निल लक्ष्य ही रहेगा।

भारतीय कृषि के समक्ष 21वीं सदी की नई चुनौतियां हैं, जिन्हें विश्व व्यापार संगठन और व्यापारजन्य मुद्दों से जोड़कर देखा जा रहा है। अधिकांश क्या लगभग शत–प्रतिशत कृषि पर ग्रामीण क्षेत्र का एकाधिकार स्थापित है फिर भी दशा दयनीय है। हमारा कृषक (अन्नदाता) कृषकाय है।

यद्यपि भारत आज कृषि उत्पाद का निबल निर्यातक है; परंतु अभी भी उसकी गुणवत्ता एवं खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र पर ध्यान दिया जाना बाकी है। इसके लिए कृषकों को उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। कुशल और सक्षम जनशक्ति का विकास करना होगा।

इस अंक की कहानी "ममत्व" एक भावनात्मक व मार्मिक कहानी है। यह कहानी अपने शीर्षक के अनुरूप ममत्व की सही व्याख्या करने में सफल रही है। 'ममत्व' ममता से बना है, यह ममता किसी के प्रति भी पैदा हो सकती है। 'ममता' में या ममत्व में केवल मोह या केवल दया नहीं है। अपितु ममत्व एक विस्तृत व व्यापक शब्द है जिसके अंतर्गत – दया, मोह और असहाय भाव सभी सम्मिलित हो जाते हैं। इसमें (इस कहानी में) कमलेश बाबू ममत्व का प्रतीक चिन्ह और प्रतिबिंब बनकर उभरते हैं। यह नायक कमलेश बाबू का सही चरित्र–चित्रण भी प्रस्तुत करती है।

सत्येंद्र पूजन प्रताप त्रिपाठी
एम.ए. (फाइनल), अर्थशास्त्र,
इलाहाबाद वि.वि., इलाहाबाद

सराहनीय पत्रिका

बहूपयोगी पत्रिका *कुरुक्षेत्र* पढ़ी। आपकी पत्रिका का नाम कई प्रतियोगी परीक्षाओं में सफल उम्मीदवारों द्वारा उल्लेखित किया जाता है, यह जानकर पत्रिका की बहु–उपयोगिता सिद्ध होती है।

दिसंबर 2003 के अंक में प्रकाशित लेख "ग्रामीणों और गरीबों हेतु नई योजनाएं: एक समीक्षा" पढ़ा। इस लेख को पढ़कर सरकार द्वारा दी जा रही सुविधाओं की जानकारी मिली। भारत सरकार द्वारा योजनाएं तो लाभप्रद बनाई जाती हैं, किंतु भ्रष्ट प्रशासन (सरकारी तंत्र) उसका सही लाभ गरीब एवं निरक्षर ग्रामीणों को नहीं लेने देता। जब तक प्रशासन में भ्रष्टाचार समाप्त नहीं होगा, योजनाओं का सही एवं पूरा–पूरा लाभ गरीब जनता को नहीं मिल सकता।

स्वास्थ्य संबंधी लेख – "आयोडीन की कमी: बीमारी और रोकथाम" (डा. नीना. कनौजिया) पढ़ा। लेख सामान्यजन के साथ–साथ चिकित्सकों के लिए भी अत्यंत लाभप्रद है। लेखक एवं आप सभी को प्रकाशन हेतु धन्यवाद।

इसी पत्रिका में प्रकाशित एक और लेख "गरीबों का बादाम मूंगफली" पढ़ा। इस लेख की छायाप्रति मैंने अपने औषधालय के बोर्ड पर जनहित हेतु लगाई है। लेख अत्यंत ज्ञानप्रद है।

कुरुक्षेत्र एक सराहनीय पत्रिका है, प्रत्येक कर्मठ जुझारू युवा वर्ग को *कुरुक्षेत्र* पढ़नी चाहिए।

डा. अल्का अलकेश खत्री
ब्यौहार बाग कन्याशाला के पीछे,
नमक कोठी, जबलपुर, म.प्र.

सरकार ही दोषी नहीं

कुरुक्षेत्र का 'नवंबर' अंक बेहद पसंद आया। कारण कि इसमें सभी लेख काफी ज्ञानवर्धक, रोचक जानकारियों से परिपूर्ण और विचारोत्तेजक थे। चूंकि मैं स्वयं एक किसान हूं इसीलिए डा. विजेंद्र सिंह के लेख 'कृषि पर आयकर कितना तर्कसंगत' और आनंद कुमार श्रीवास्तव के लेख 'कृषि करारोपण किसान एवं देशहित में' से मैं विशेष रूप से प्रभावित हुआ। ये सच है कि आज गांव में भी लोग अच्छे जीवन स्तर

के लिए टी.वी., कूलर, फ्रिज, टेलीफोन, गाड़ी, सड़क सहित सभी सुविधाएं चाहते हैं लेकिन दरिद्रता उनका पीछा नहीं छोड़ रही है। इसकी एक खास वजह सड़क, शिक्षा, संचार, स्वास्थ्य, बिजली और पानी की बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी है। इन सुविधाओं में कमी के लिए पूरी तरह सरकार को दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि विकास के लिए पैसा चाहिए और ग्रामीणों की राष्ट्रीय आय में भागीदारी नगण्य होती है।

हुलास राम कटरे
करियादंड, बालाघाट (म.प्र.)

कुरुक्षेत्र एक दिशा

पुस्तक विक्रेता के यहां पुस्तक खरीदते समय पहली बार (नवं. 03) इस पत्रिका पर नजर पड़ी। ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका पढ़कर मन प्रफुल्लित हो गया और मैं आपकी पत्रिका का कायल हो गया। साहित्य और स्वास्थ्य के कॉलम पढ़े, बहुत अच्छा लगा। पर्यावरण एवं जल प्रदूषण पर लेख भी ज्ञानवर्धक थे। महिला स्वास्थ्य एवं बाल विकास भी एक सराहनीय कदम था। इसको पढ़कर ऐसा आभास हुआ कि यह संपूर्ण पत्रिका है एवं नवचेतना जाग्रत करती है जो आज के युवा वर्ग के लिए विशेष आवश्यकता है। मैं एक सुझाव देना चाहता हूं कि ग्रामीण विकास के साथ–साथ अच्छे लेखकों एवं महापुरुषों की प्रेरणास्रोत जीवनी व आत्मकथा भी प्रकाशित करें। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप मेरी सलाह पर गौर करेंगे।

विजयकरण भूपेरा
मु.पो. टीटनवाड. वाया गुढा
जिला झुंझुनू, (राज.)

पते भी दें

मैं सिविल सर्विस की तैयारी कर रहा हूं और *कुरुक्षेत्र* का पाठक हूं। इसके सभी लेख बेहद अच्छे व प्रेरणादायी होते हैं और इस पत्रिका से हमारी अनेक जिज्ञासाएं शांत होती हैं। मैं ग्रामीण परिवेश का हूं। मैं चाहता हूं कि आप अपनी इस पत्रिका में विभिन्न मंत्रालयों, गैर–सरकारी संस्थाओं के पते भी दें जिससे गांव का असहाय गरीब/सताई महिलाएं विभिन्न समस्याओं को पोस्टकार्ड के माध्यम से उचित स्तर तक पहुंचा सकें। महोदय, सरकार अपने विभागों, आयोगों पर इतना धन खर्च करती है पर देश के 70 प्रतिशत निवासियों गरीबों को यह भी नहीं पता कि वह उक्त मंत्रालय में अपनी बात कैसे पहुंचाएं। अगर आप *कुरुक्षेत्र* में थोड़ी–सी जगह देकर पत्र व्यवहार के पते प्रकाशित करें तो भारत के गरीब गांव के निवासी महिला–पुरुष अपनी शिकायत मंत्रालयों या आयोगों को भेज सकेंगे।

अनिल कुमार शुक्ल
27, कंचन शुक्ला बाग,
सबोरी इलाहाबाद, उ.प्र.

यादगार लेख

नवंबर 2003 का अंक प्राप्त हुआ। हर बार की तरह इस अंक में भी कुछ यादगार लेख पढ़ने को मिले जिनकी सराहना किए बिना लेखकों और पत्रिका के प्रति अन्याय होगा।

डा. नीना गुप्ता का लेख *ग्लोबल वार्मिंग–एक अहम चुनौती* वर्तमान में बढ़ते पारिस्थितिकी असंतुलन की सूक्ष्मतम विवेचना है। डा. गुप्ता ने सरल और ग्राह्य शब्दों के साथ विश्लेषण कर लेख का महत्व बढ़ा दिया। आज सरकारी प्रयासों और कुछ स्वैच्छिक गैर–सरकारी संस्थाओं के अलावा पारिस्थितिकी पर किसी का ध्यान नहीं है। आम जनता तो ग्लोबल वार्मिंग और भविष्य के संकट से बिल्कुल ही अनभिज्ञ है। आज समय रहते यदि कोई आम जनता को जागरूक कर असंतुलन को रोक सकता है, तो वह है मीडिया। आज मीडिया को इस क्षेत्र में अपनी सक्रियता दिखाने की नितांत आवश्यकता है वरना संपूर्ण मानव का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाएगा।

कृषि पर कर लगाने की बातें बराबर होती रहती हैं। इस अंक में भी कई लेख हैं परंतु शोध शात्र आनंद कुमार श्रीवास्तव का लेख "कृषि करारोपण किसान एवं देशहित में" अंक का सर्वोत्तम लेख रहा क्योंकि यह गागर में सागर समाहित किए हुए मात्र एक पेज के लेख में पूरी धारणा स्पष्ट करने वाला है।

संतोश कुमार गुप्ता
पिंडरा, पो० बलरामपुर
जिला सरगुजा, छत्तीसगढ़

रोचक और ज्ञानवर्धक अंक

ग्रामीण विकास को समर्पित *कुरुक्षेत्र* अक्तूबर, 2003 का वार्षिकांक, जो 'ग्रामीण भारत के

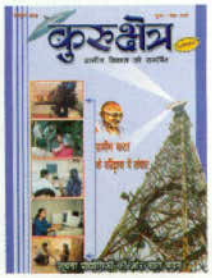

परिदृश्य में संचार की भूमिका' पर आधारित था को काफी गंभीरतापूर्वक पढ़ा। सचमुच सूचना प्रौद्योगिकी की ओर बढ़ते कदम को देखकर मन में काफी उत्सुकता जगी। इस अंक के माध्यम से यह प्रयास करने की चेष्टा की गई कि ग्रामीण विकास में संचार माध्यमों का योगदान कहां तक हो पाया है।

भारत में ग्रामीण जनता तक विकास संबंधी संदेश पहुंचाने में परंपरागत संचार माध्यम अपनी भूमिका निभा रहे हैं और उन्होंने अतीत में लोगों के दृष्टिकोण को खासा प्रभावित किया है। जहां तक ग्रामीण श्रोताओं के नजरिए में बदलाव लाने का सवाल है, हमें परंपरागत संचार माध्यमों पर ही निर्भर रहना होगा क्योंकि ग्रामीणजनों को इन्हीं माध्यमों में अपनी छवि नजर आती है, ये उन्हें अपने लगते हैं। वहीं दूसरी तरफ अगर भारतीय सिनेमा पर नजर दौड़ाई जाए तो स्पष्ट पता चलेगा कि आज पूरी फिल्म सिटी को लकवा मार गया है। चंद फिल्मों को छोड़कर अधिकतर फिल्मकार उद्देश्यविहीन फिल्में बनाने में लगे हुए हैं। इनका संघर्ष समाज सेवा से नहीं वरन अच्छे व्यवसाय से है। कुछ फिल्मकारों को छोड़कर अधिकतर फिल्मकार अश्लीलता की दहलीज को पार कर चुके हैं।

ग्रामीण विकास में रेडियो और दूरदर्शन के प्रसारण ने सचमुच बहुत उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। आज भी भारत के ऐसे गांव हैं जहां पत्र–पत्रिकाएं नहीं पहुंच पा रही हैं। वहां सिर्फ टी.वी. एवं रेडियो ही सहारा हैं। इससे स्पष्ट होता हैं कि ग्रामीण विकास में टी.वी. एवं रेडियो अपना उल्लेखनीय योगदान दे रहे हैं।

सचमुच यह अंक काफी रोचक एवं ज्ञानवर्धक रहा। जिस प्रकार से ग्रामीण विकास में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका रही है, इससे ऐसा लगता है कि विकसित राष्ट्र का जो लक्ष्य निर्धारित किया गया है, उसे पाने में विलंब नहीं होगा।

पवन कुमार त्रिभुवन
तिलका मांझी, भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर

संपादकीय

पापी पेट इन दो शब्दों में जैसे जीवन का सार छिपा हुआ है। भोजन एक ऐसी मूलभूत आवश्यकता है जिसके बिना जीवन की कल्पना नामुमकिन है। पेट को 'पापी' भी इसीलिए कहा गया है क्योंकि इसी को पालने के नाम पर एक आदमी दिन–रात मेहनत– मजदूरी करता है तो वहीं दूसरा चोरी, लूटपाट और खून–खराबा तक करता है! इन दिनों पूरे के पूरे परिवार द्वारा सामूहिक आत्महत्या की भी कई घटनाएं घटी हैं। कारण, कर्ज में डूबे इन परिवारों के लिए अपनी रोटी का जुगाड़ तक करना मुश्किल हो गया था!

यह कैसी विडंबना है! हमारे देश में आज खाद्यान्न की कोई कमी नहीं है बल्कि गोदामों की अनुपलब्धता या ठीक रखरखाव के अभाव में टनों अनाज सड़–गल जाता है। ऐसे में खाद्यान्नों का समान वितरण, और रखरखाव के पर्याप्त उपाय सुनिश्चित करना किसी भी सरकार का परम कर्त्तव्य होना चाहिए।

देश में तेजी से बढ़ती जनसंख्या के मद्देनजर अनुमान है कि आने वाले वर्षों में खाद्यान्न की मांग तेजी से बढ़ेगी और सभी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना किसी भी सरकार के लिए बड़ी चुनौती होगी। अनुमान है कि वर्ष 2030 में हमारे देश में खाद्यान्न मांग 26 करोड़ से 26.40 करोड़ टन के बीच होगी। वर्ल्डवाच इंस्टीट्यूट के विशेषज्ञ प्रो. लेस्टर ब्राउन ने आशंका व्यक्त की है कि भारत इस मांग को पूरा नहीं कर पाएगा। जबकि अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ नार्मन बोरलाग का कहना है कि 2025 तक अनुमानित खाद्य आपूर्ति को हम तभी पा सकते हैं जबकि सभी खाद्यान्नों का उत्पादन 1990 की तुलना में 80 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सके।

कृषि विशेषज्ञ एम.एस स्वामीनाथन का मानना है कि विकास एवं जनसंख्या वृद्धि के साथ खाद्य सुरक्षा की बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए हरितक्रांति के बाद भारत को अब एक 'सदाबहार क्रांति' की आवश्यकता है जो देश में आय एवं रोजगार बढ़ाने में सहायक हो जिसके लिए हमें अपनी विकास नीति तथा कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में निर्देशात्मक परिवर्तन करने होंगे। यह 'सदाबहार क्रांति' कृषि व्यवस्था में ऐसे परिवर्तनों पर आधारित होनी चाहिए जिससे कि बिना किसी पर्यावरणीय एवं सामाजिक क्षति के उत्पादकों को अधिक भूमि, जल एवं श्रम संसाधन उपलब्ध कराए जा सकें। वित्त मंत्रालय द्वारा गठित के.पी. गीता कृष्णन कमेटी ने खाद्य सुरक्षा की दशा में सुधार के लिए खाद्य सब्सिडी घटाने, निजी क्षेत्र की भागीदारी तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली को और अधिक गरीबोन्मुखी बनाने पर जोर दिया है।

यदि हमें भविष्य में खाद्य सुरक्षा संबंधी सभी आशंकाओं को झुठलाना है तो हमें एक दीर्घकालीन नीति तय करनी होगी जो देश में खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ खाद्यान्न संभरण और वितरण प्रणाली को रोजगार और गरीबी से जोड़े तभी हम खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से एक सुरक्षित भविष्य तथा भूखमुक्त भारत की कल्पना कर सकते हैं।

खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ हमें आज यह भी सुनिश्चित करना होगा कि हम कृषि में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग धीरे–धीरे कम करें क्योंकि इनका धीमा जहर हमें भीतर से खोखला बना रहा है। शरीर के साथ–साथ मन–मस्तिष्क की कमजोरी तथा बीमारियों का प्रमुख कारण भी कृषि में असंतुलित मात्रा में प्रयोग हो रहे उर्वरक एवं कृषि रसायन ही हैं। आज समय आ गया है कि हम पारंपरिक और जैविक खाद का उपयोग और मूल्य समझें। साथ ही यह भी जरूरी है कि जैविक खादों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपग्रेड किया जाए जिससे अधिक से अधिक पोषक तत्व खाद में आ सकें। कीटनाशकों के रूप में भी देशी चीजें जैसे नीम की नीमोली तथा गोमूत्र आदि के इस्तेमाल को बढ़ावा देना महज जरूरी हो गया है। इन दिनों पराजीवी फसलों को उगाने की दिशा में भी पहल की जा रही है क्योंकि ये फसलें बहूपयोगी साबित हुई हैं। इनमें रोग और कीट प्रतिरोधक क्षमता तो होती ही है साथ ही ये अधिक उपज देने में भी सक्षम हैं।

अभी तक हमने बात की खाद्य सुरक्षा, कृषि में रासायनिक खाद के उपयोग से हो रहे नफा–नुकसान और पराजीवी फसलें उगाने की दिशा में हो रही पहल की, अब हम आपको बताने जा रहे हैं किसानों के लिए देशभर में खुल रहे 'किसान हरियाली बाजार', 'किसान केंद्र' या कहिए किसान सुपर स्टोर्स के बारे में। वैसे तो नाम से ही जाहिर है कि यहां किसानों के उपयोग की ही वस्तुएं होंगी। जी हां, ये कुछ ऐसे आधुनिक कंप्यूटराइज्ड डिपार्टमेंटल स्टोर हैं जहां किसानों के लिए हंसिया, दरांती, बीज, उर्वरक से लेकर ट्रेक्टर तथा क्रेडिट स्कीमों की जानकारी तक उपलब्ध है। देश के ग्रामीण मानचित्र पर तेजी से उभरते ये किसान सुपर बाजार किसानों को बहुत–सी आधुनिक सुविधाएं उनके घर–द्वार तक रीटेल प्राइज में पहुंचाने का कारगर जरिया साबित होंगे, ऐसी उम्मीद है। कार्पोरेट जगत की इन किसान केंद्रों में रुचि बाजार के किसान के कदमों पर झुकने का प्रमाण है।

इस अंक में 'रोजगार' शीर्षक के अंतर्गत अश्वगंधा की खेती के बारे में बताया गया है; ऊनी गलीचा उद्योग के बारे में भी जानकारी दी गई है। विकलांगों के वास्ते स्वरोजगार योजना तथा उसका लाभ उठाने संबंधी विवरण भी शामिल है। स्वास्थ्य चर्चा में नवजात शिशुओं को लगवाए जाने वाले टीकों की जानकारी है। साथ ही इसबगोल के गुणों का भी जिक्र है। 'सफलता की कहानी' और 'पुस्तक–चर्चा' तो हैं ही! ये अंक आपको कैसा लगा, हमें अपनी राय से जरूर अवगत कराइएगा। ❑

हमारे नए साहित्यिक प्रकाशन

गोविंदस्वामी

लेखक : डा. हरगुलाल

अष्टछाप के कवियों में गोविंदस्वामी का स्थान अग्रगण्य है। गोविंदस्वामी की भाव व्यंजना का प्रमुख माध्यम संगीत है। हर प्रसंग की अनुभूति को गोविंदस्वामी ने विभिन्न राग-रागनियों के सांचे में ढ़ाला है। गोविंदस्वामी के अधिकांश पद 'गेयपद' और 'कीर्तन शबद' का समन्वित रूप प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भगवदीय वृत्ति के शब्दाकार गोविंदस्वामी के काव्य की भाव संपदा का सम्यक आकलन मध्ययुगीन हिंदी कृष्ण काव्य के अध्येता डा. हरगुलाल ने किया है।

पृष्ठ संख्या : 122 मूल्य : 65 रुपये

तंत्रीवादक

लेखक : डा. प्रकाश महाडिक

प्राचीनकाल से ही संगीत में तंत्रीवाद्यों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आज भी संगीत की प्रत्येक विद्या में तंत्रीवाद्यों का विशेष महत्व है। एकल वादन के साथ-साथ संगत एवं वाद्यवृंद में भी इन वाद्यों का बहुतायत से प्रयोग होता है। हमारा भारतीय संगीत उत्थान, पतन और पुनर्निर्माण के अनेक दौर देख चुका है। कलाकारों ने विपरीत परिस्थितियों में भी संगीत की साधना की। इन कलाकारों की अथक साधना की बदौलत ही भारतीय संगीत की महत्ता आज भी बरकरार है। इन कलाकारों से परिचय कराती इस पुस्तक के लेखक डा. प्रकाश महाडिक स्वयं एक जाने-माने बेला वादक और संगीत साधक हैं।

पृष्ठ संख्या : 134 मूल्य : 60 रुपये

हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की घराना परंपरा

लेखक : शम्भुनाथ मिश्र

हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में 'घराना' अर्थात् 'संगीत की सौंदर्य प्रणाली की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में ख्याल गायन में घरानों का अस्तित्व अवश्य माना गया है। घरानों का मतलब, उनकी सीमाएं, हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में उनके योगदान और आज उनकी उपयोगिता आदि पर चर्चा के साथ-साथ हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के लगभग सभी घरानों और उनसे जुड़े संगीतज्ञों का परिचय इस पुस्तक में दिया गया है। पुस्तक के लेखक शम्भुनाथ मिश्र संगीत के गहरे जानकार हैं। संगीत पर उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

पृष्ठ संख्या : 195 मूल्य : 115 रुपये

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001

खाद्य सुरक्षा : वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की चुनौतियां

☞ योगेश बंधु आर्य

विकास एवं जनसंख्या वृद्धि के साथ खाद्य सुरक्षा की बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए हरितक्रांति के बाद भारत को अब एक सदाबहार क्रांति की आवश्यकता है जो देश में उत्पादन, आय एवं रोजगार बढ़ाने में सहायक हो जिसके लिए हमें अपनी विकास नीति एवं कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में निदर्शनात्मक परिवर्तन करने होंगे। यह सदाबहार क्रांति कृषि व्यवस्था में ऐसे परिवर्तनों पर आधारित होनी चाहिए जिससे कि बिना किसी पर्यावरणीय एवं सामाजिक क्षति के उत्पादकों को अधिक भूमि, जल एवं श्रम संसाधन उपलब्ध कराए जा सकें।

सामान्य अर्थों में किसी देश के लिए खाद्य सुरक्षा का अर्थ उसके निवासियों के लिए पर्याप्त खाद्य की आपूर्ति से है अर्थात् सभी व्यक्तियों के लिए सभी समय पर एक सक्रिय स्वस्थ जीवन के लिए पर्याप्त भोजन की उपलब्धि, किंतु इसमें प्रत्यक्ष रूप से पर्याप्त खाद्य आपूर्ति के साथ–साथ अन्य बातें भी शामिल हैं, जैसाकि खाद्य एवं कृषि संगठन का मानना है, – 'खाद्य सुरक्षा को सभी व्यक्तियों को सभी समय पर उनके लिए आवश्यक बुनियादी भोजन के लिए भौतिक एवं आर्थिक दोनों रूप में उपलब्धि के आश्वासन के रूप में देखा जाना चाहिए'। इस प्रकार जहां खाद्य सुरक्षा के लिए समग्र जनसंख्या को उपलब्ध भोजन भौतिक रूप से गुणवत्ता एवं मात्रा दोनों रूप में पर्याप्त होना चाहिए वहीं सभी को पर्याप्त खाद्य उपलब्ध कराने के लिए लोगों के पास पर्याप्त क्रयशक्ति होना जरूरी है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार प्रतिदिन मात्रात्मक रूप में अनाज की प्रति व्यक्ति आवश्यकता 440 ग्राम है, इसके द्वितीय विश्व सर्वेक्षण के अनुसार भारतीयों के भोजन में प्रतिदिन 2300 कैलोरी होना आवश्यक है।

भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद से ही गंभीर खाद्यसंकट का सामना करना पड़ा क्योंकि एक बड़ा उत्पादक क्षेत्र बंटवारे में गंवाना पड़ा, इसके अतिरिक्त तत्कालीन खाद्य संकट नीची उत्पादकता तथा व्यापक गरीबी से भी संबंधित था, अतः भारतीय आयोजकों ने खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को एक महत्वपूर्ण लक्ष्य स्वीकार किया। भारत में खाद्य सुरक्षा के तीन पहलू हैं: 'पहला, विश्व के अधिकांश देशों की तुलना में भारत में खाद्यान्नों की अपर्याप्त आपूर्ति; खाद्यान्नों के उत्पादन और उत्पादकता में तमाम वृद्धि के बावजूद लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी न्यूनतम उपयोग स्तर प्राप्त करने में असमर्थ है। दूसरा, भारत में लोगों को उपलब्ध भोजन में पर्याप्त पोषक तत्व (प्रोटीन, विटामिन, खनिज पदार्थ आदि) नहीं होते हैं; और तीसरा, देश में पर्याप्त गरीबी को देखते हुए खाद्य पदार्थों की कीमतें ऊंची रही हैं तथा इनमें लगातार वृद्धि होती रही है जिसके कारण लोगों को पर्याप्त मात्रा में खाद्य पदार्थ उपलब्ध नहीं हो पाता। वर्ष 1981–82 को आधार मानकर खाद्यान्नों का जो कीमत सूचकांक 1982–83 में 118 था, 1996–97 तक बढ़कर 373 हो गया।

इन प्रवृत्तियों को देखते हुए सरकार ने आरंभ से ही गरीबी उन्मूलन के साथ–साथ अपनी खाद्य नीति में खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों की वितरण व्यवस्था पर भी पर्याप्त जोर दिया। योजनाकाल के आरंभ में अतिरिक्त खाद्यान्नों की पूर्ति के लिए इनका आयात किया जाता था, किंतु तीसरी पंचवर्षीय योजना के पश्चात खाद्यान्न के क्षेत्र में आयात पर निर्भरता को कम करने के लिए तत्कालीन कृषि मंत्री सी. सुब्रमणियम के कार्यकाल में उच्च उत्पादन क्षमता वाले बीजों के आयात का निर्णय लिया गया तथा एक नई कृषि नीति अपनाई गई। इस प्रकार 1966 में खरीफ की फसल के साथ आरंभ हरितक्रांति के परिणामस्वरूप 1976 तक खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली गई और खाद्यान्न उत्पादन 1950–51 में 508 लाख टन से बढ़कर 1998–99 में 2000 लाख टन हो गया। इस नई कृषि विकास नीति में अधिक उपज वाली किस्मों के कार्यक्रम के अतिरिक्त कृषियोग्य भूमि का विकास और बहुफसली कार्यक्रम भी शामिल था। इन संगठित प्रयासों के परिणामस्वरूप अनेक फसलों का उत्पादन बढ़ा तथा योग्य भूमि भी 1966–67 में 19 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 1995–1996 में 750 लाख हेक्टेयर हो गई।

उन्नत किस्म के बीजों, अधिक खाद और श्रेष्ठतर तकनीक से जहां एक ओर उत्पादकता में भारी वृद्धि हुई वहीं रासायनिक खाद की

खपत 1965–66 में 8 लाख टन थी जो वर्तमान समय में बढ़कर 8 गुना से भी अधिक हो गई है। सिंचित क्षेत्र 380 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 800 लाख हेक्टेयर हो गया। साथ ही साथ कृषि भूमि पर मशीनों के प्रयोग में भी वृद्धि हुई है। किंतु इस क्रांति का विस्तार सीमित एवं संतुलित रहा। फसलों की दृष्टि से यह जहां गेहूं, चावल व मोटे अनाजों तक ही सीमित रहा। वहीं देश के अंदर ही इन फसलों के उत्पादन व उत्पादकता में क्षेत्रवार व्यापक असमानता देखने को मिली।

उत्तर प्रदेश जिसके पास कुल कृषि क्षेत्र का 20.5 प्रतिशत हिस्सा है, उसका देश के कुल कृषि उत्पादन में योगदान केवल 21.4 प्रतिशत है जबकि पंजाब के पास कुल कृषि क्षेत्र का केवल 5.7 प्रतिशत हिस्सा है जिसके आधार पर वह देश के कृषि उत्पादन में 10. 8 प्रतिशत योगदान देता है। इसी प्रकार पंजाब में गेहूं की उत्पादकता वर्ष 1996–97 में प्रति हेक्टेयर 3,707 किग्रा. थी जबकि उत्तर प्रदेश में 2093 किग्रा.। उत्पादकता में यह अंतर मुख्यतः सिंचाई सुविधाओं व अन्य कृषि क्षेत्र आगतों के प्रयोग में अंतर के कारण है। पंजाब में लगभग 96 प्रतिशत कृषि क्षेत्र सिंचाई के अधीन है जबकि कुछ राज्यों में यह 12 से 25 प्रतिशत के बीच ही है। देश में सिंचाई अधीन क्षेत्र के प्रतिशत और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में सहसंबंध गुणांक बहुत ऊंचा (0.86 प्रतिशत) है जिसके कारण जिन राज्यों में सिंचाई सुविधाएं पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं, वहां पर उत्पादकता अधिक है। इसी कारण हरितक्रांति का लाभ विकसित राज्यों, बड़े जमीदारों और संपन्न किसानों को ही अधिक हुआ तथा भूस्वामित्व में असमानता तथा कृषि साधनों, पर्याप्त वित्तीय सुविधाओं एवं तकनीकी ज्ञान की सीमित उपलब्धता के कारण कृषि क्षेत्र में असमानताएं बढ़ीं, फलस्वरूप अस्सी के दशक तक कृषि क्षेत्र में स्थिरता आ गई।

खाद्य वस्तुओं की मांग सामान्यतः तेजी से बढ़ती जा रही है, क्योंकि हरितक्रांति काल के तीन दशकों में जनसंख्या वृद्धि की औसत वार्षिक वृद्धि दर दो प्रतिशत से थोड़ी अधिक ही रही है, जिसके कारण उत्पादन में थोड़ी कमी आने पर खाद्य आपूर्ति की प्रति व्यक्ति प्राप्यता गिर जाती है। इसके अतिरिक्त कम आय वाले लोगों में अनाज की मांग भी तेजी से बढ़ती है। उत्पादन में धीमी एवं अनिश्चित वृद्धि, कम एवं घटती–बढ़ती आपूर्ति, अपर्याप्त क्रयशक्ति एवं मूल्यों में उच्चावचन के कारण खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता के बावजूद खाद्य सुरक्षा के मामले में निरंतर अनिश्चितता बनी रहती है।

आने वाले 25 वर्षों में जनसंख्या में निरंतर वृद्धि, उत्पादन एवं उत्पादकता में असमान वृद्धि, कृषि क्षेत्र में पर्याप्त आधारभूत संरचनाओं की कमी, साधनों की अनुपलब्धता तथा बढ़ती लागतों को देखते हुए वर्ल्ड वाच इंस्टीट्यूट के विशेषज्ञ प्रो. लेस्टर ब्राउन यह आशंका प्रकट करते हैं कि आने वाले 20–30 वर्षों में जबकि भारत की खाद्यान्न मांग वर्ष 2030 में 260 से 264 मिलियन टन के बीच होगी, भारत अपने नागरिकों को पर्याप्त खाद्य सुरक्षा उपलब्ध नहीं करा पाएगा। अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ नार्मन बोरलाग का मानना है कि 2025 तक अनुमानित खाद्य आपूर्ति को हम तभी पा सकते हैं जबकि सभी खाद्यान्नों का उत्पादन 1990 की अपेक्षा 80 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सके।

इस शंकाओं और पूर्वानुमानों के आधार पर ही कृषि क्षेत्र में उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास जारी हैं तथा सरकार द्वारा अपनाई गई खाद्यनीति में खाद्यसामग्री की मांग और पूर्ति में संतुलन स्थापित करने के लिए सरकार ने कीमतों की स्थिरता सुनिश्चित करने पर व जनसंख्या नियंत्रण की ओर ध्यान केंद्रित किया है तथा उपलब्ध सामग्री के समुचित वितरण के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अपनाया गया, जिसका उद्देश्य जनसंख्या को न्यूनतम आवश्यक उपभोग स्तर प्राप्त करने में सहायता देना था। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत खाद्यान्न उपलब्ध कराने का मुख्य कार्य 1965 में स्थापित भारतीय खाद्य निगम करता है। निगम सामग्री की खरीदारी, भंडारण, संग्रहण, स्थानांतरण, वितरण व बिक्री का कार्य करता है। निगम एक ओर यह सुनिश्चित करता है कि किसानों को उनके उत्पादन की उचित कीमत मिले तथा दूसरी ओर उपभोक्ताओं को एक समान कीमत पर खाद्यान्न उपलब्ध हो।

समाज के जरूरतमंद वर्गों को खाद्यसुरक्षा उपलब्ध कराने के दृष्टिकोण से ही बजट अनुमानों के अनुसार 1998–99 में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से 9000 करोड़ रुपये की खाद्य सब्सिडी दी गई। किंतु भारत में खाद्यान्न पर दी जाने वाली सब्सिडी का अधिकांश हिस्सा उत्पादकों की सुरक्षा पर व्यय होता है न कि उपभोक्ताओं पर जिसके कारण सार्वजनिक वितरण प्रणाली अधिक खर्चीली साबित हो रही है तथा इसमें लक्ष्य विकृति देखने को मिलती है। **एक अध्ययन के अनुसार सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा मासिक क्रय सभी राज्यों में सबसे गरीब वर्गों के लिए ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में बहुत कम है। अतः प्रभावी फैलाव और सब्सिडी के रूप में किया गया राज्य स्तर पर अतिरिक्त व्यय इस बात की गारंटी नहीं देता कि गरीब वर्गों को पर्याप्त खाद्यसुरक्षा उपलब्ध हो रही है।**

सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा खाद्य संभरण एवं पूर्ति में भी निरंतरता देखने को नहीं मिलती, आर्थिक उदारीकरण आरंभ होने के बाद के वर्षों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अधीन अनाज के क्रय में गिरावट आई। 1991–92 से 1994–95 के बीच सार्वजनिक वितरण प्रणाली से गेहूं का क्रय 87.8 लाख टन से घटकर 48.3 लाख टन हो गया, इसी प्रकार चावल का क्रय समान अवधि में 99.4 लाख टन से घटकर 80 लाख टन हो गया। इस कमी का प्रमुख कारण गेहूं और चावल की जारी कीमतों में लगातार वृद्धि तथा इनकी खराब गुणवत्ता है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अधीन लगातार मूल्य बढ़ने से खुले बाजार से मूल्यों में अंतर कम हो गया है। 1990–91 से 1995–96 के मध्य न्यूनतम आलंबन कीमतों में गेहूं में 69 प्रतिशत तथा चावल में 44 प्रतिशत की वृद्धि हुई। पिछले वर्ष गेहूं की कीमतों में 52 प्रतिशत की वृद्धि हुई जिसके फलस्वरूप गेहूं का क्रय 1998–99 में 80 लाख टन से घटकर 1999–2000 में 50 लाख टन हो गया। एक अप्रैल, 2002 से इसमें 32 प्रतिशत की पुनः वृद्धि के कारण अप्रैल–जून के मध्य खपत समान अवधि के लिए पिछले वर्ष के 12 लाख टन से घटकर 7 लाख टन हो गई। इसी अवधि में चावल के मूल्यों में 30 प्रतिशत वृद्धि होने के प्रत्युत्तर में चावल की खपत 26 लाख टन से घटकर 18 लाख टन हो गई। उल्लेखनीय है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा खाद्यान्नों की खरीद सामान्यतः गरीब एवं मध्यम वर्गों द्वारा ही की जाती है।

इस बीच, सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा खरीद में कमी तथा अत्यधिक उत्पादन के कारण भारतीय खाद्य निगम को बाजार में मांग एवं पूर्ति में संतुलन स्थापित करने तथा उत्पादकों के हितों की सुरक्षा के दृष्टिकोण से अधिक मात्रा में खाद्यान्नों का क्रय करना पड़ रहा है। जुलाई 1995 में बफर स्टॉक निर्धारित 225 लाख टन के विपरीत 356 लाख टन था। इसी प्रकार जुलाई 2000 में इन गोदामों में 422 लाख टन बफर स्टॉक था जोकि निर्धारित मात्रा से 180 लाख टन ज्यादा था। गेहूं का स्टॉक जोकि 143 लाख टन होना चाहिए, वह 277 लाख टन से भी अधिक था। इसके बावजूद देश में 35 करोड़ से अधिक लोग भूखे हैं, यह कितना बड़ा विरोधाभास है। इस बफर स्टॉक पर सरकार को 4000 करोड़ रुपये सालाना खर्च करना पड़ेगा। इस स्थिति को देखते हुए सरकार ने गेहूं की निर्यात सीमा 10 लाख टन बढ़ा दी है, किंतु देश में गेहूं की लागतों को देखते हुए अंतर्राष्ट्रीय बाजार में गेहूं की कीमतें बहुत कम हैं जिसके कारण विश्व बाजार में भारत के लिए गेहूं का निर्यात बहुत अनुकूल नहीं है। इस प्रकार **भारतीय खाद्य निगम तथा केंद्र एवं राज्य सरकारों के खाद्यान्न गोदामों की कुल स्थापित क्षमता का 90 प्रतिशत से भी अधिक भाग प्रयोग किया जा चुका है। पंजाब एवं हरियाणा में खुले मैदानों में खाद्यान्नों को रखना पड़ रहा है। इस समस्या के आगे चलकर और भी गंभीर होने की संभावना है।**

विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार जिन राज्यों में गरीबी का अनुपात अधिक है, उन्हीं राज्यों में भारतीय खाद्य निगम से क्रय सबसे नीचा है, यदि वितरण की समुचित व्यवस्था की जाए तो अतिरिक्त खाद्यान्न तथा भूख की समस्या दोनों से छुटकारा पाया जा सकता है। इस अतिरेक उत्पादन के लिए गोदामों की व्यवस्था करने के लिए सरकार को 320 रुपये प्रति क्विंटल की दर से खर्च वहन करना पड़ेगा। अतः पिछले वर्ष सितंबर में केंद्रीय मंत्रिमंडल की एक बैठक में इस अतिरेक खाद्यान्न भंडार से गरीबों को मुफ्त अनाज बांटने की बात कही गई, परंतु दीर्घकालीन खाद्यसुरक्षा की दृष्टि से यह बहुत लाभदायक नहीं कहा जा सकता। इसकी अपेक्षा 'काम के बदले अनाज' जैसी योजना अधिक कारगर साबित होगी।

हरितक्रांति काल के बाद विक्रय अतिरेक बढ़ने के दो प्रमुख कारण रहे हैं – पहला, जहां प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर शहरीकरण बढ़ने के कारण प्रति व्यक्ति खाद्यान्न के उपभोग में अंतर आया है, क्योंकि गांवों की अपेक्षा शहरों में कुल खाद्य पदार्थों में खाद्यान्नों का अनुपात कम होता है। पिछले आठ–नौ वर्षों से लगातार अनुकूल मानसून होने के बावजूद उत्पादन के संदर्भ में कृषि में लाभ तथा कृषि के लिए व्यापार की लाभदायक शर्तें सीमित ही रही हैं। यह उल्लेखनीय है कि देश के औद्योगिक विकास पर जोर दिए जाने के कारण कृषि एवं इससे संलग्न क्रियाओं का सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सा लगातार घटकर लगभग 27 प्रतिशत हो गया, फिर भी कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधारस्तंभ बनी हुई है किंतु हाल के वर्षों में अर्थव्यवस्था में वृद्धि कृषि क्रियाकलापों से ज्यादा प्रभावित नहीं रही है। इस प्रवृत्ति को देखते हुए कृषि को ज्यादा विश्वसनीय व्यवसाय बनाने की आवश्यकता है। इसके लिए **कृषि क्षेत्र में सरकारी निवेश बढ़ाने के साथ – साथ निजी निवेश को भी प्रोत्साहन देना होगा तथा कृषि क्षेत्र की असमानताओं को कम करना होगा। क्योंकि देश में तेजी से बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए रोजगार एवं आय वृद्धि के लिए कृषि क्षेत्र एक बड़े सुरक्षा जाल के रूप में कार्य कर सकता है।**

खाद्य सुरक्षा की स्थिति प्राथमिक रूप से खाद्यान्न उत्पादन से संबंधित है। अभी तक देश में कृषि क्षेत्र की औसत वृद्धि दर 1950–51 से 1989–90 तक 2.38 प्रतिशत रही है जो विश्व कृषि विकास दर से नीची है जबकि सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात के रूप में भारत में कृषि क्षेत्र में सार्वजनिक व्यय अन्य एशियाई देशों की अपेक्षा अधिक रहा है। फिर भी यह क्षेत्रीय असमानता गरीबी दूर करने तथा कृषि विकास में सहायक नहीं रही क्योंकि कृषि क्षेत्र की औसत विकास दर 2.38 प्रतिशत वार्षिक रही, जबकि गैर कृषि क्षेत्र की विकास दर 4.83 प्रतिशत रही है।

इस अंतर के बावजूद कृषि क्षेत्र से गैर–कृषि क्षेत्र को जनसंख्या का पलायन लगभग नगण्य रहा है क्योंकि गैर–कृषि क्षेत्र संगठित क्षेत्र है जिसमें अकुशल श्रमिकों का प्रवेश सरलतापूर्वक नहीं हो पाता। इस कारण कृषि क्षेत्र अकुशल श्रमिकों का आश्रयस्थल बनता जा रहा है। इस समस्या के हल के लिए कृषियोग्य क्षेत्र में वृद्धि होना आवश्यक है, किंतु उत्पादकता की अपेक्षा कृषियोग्य भूमि का विस्तार एक सीमित स्तर तक ही किया जा सकता है। 1950 से 70 के मध्य कृषि उत्पादन क्षेत्र में 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादन में 43 प्रतिशत की वृद्धि हुई। सन् 1970–71 से 1996–97 के बीच क्षेत्र विस्तार घटकर केवल 11 प्रतिशत ही रहा, जबकि उत्पादन में 61 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

इस बीच देश में कृषि प्रवृत्ति में भी पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। 1980 और 1990 के दशक में पूर्वी राज्यों असम, बिहार, उड़ीसा और प. बंगाल का प्रदर्शन पूर्व की अपेक्षा बेहतर रहा है तथा इसमें लगातार सुधार हो रहा है। जिन राज्यों ने हरितक्रांति काल में बेहतर प्रदर्शन किया था उनमें खाद्यान्नों की उत्पादन दर गिरने लगी है तथा उत्पादन लागत बढ़ती जा रही है। इसके साथ ही देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में खरीफ की फसल का योगदान कम हो रहा है। सन् 1970–71 में जहां खरीफ की फसल 650 लाख टन तथा रबी की फसल इसकी लगभग आधी 320 लाख टन थी, वहीं 1996 में खरीफ की फसल 990 लाख टन व रबी की फसल इससे थोड़ी ही कम 860 लाख टन थी। विश्व बैंक के अनुसार देश में सकल साधन उत्पादकता जोकि तकनीकी प्रगति का मापक है, 1970 के दशक में 1.93 प्रतिशत थी जो 80 के दशक में बढ़कर 1.99 प्रतिशत हो गई किंतु 90 के दशक के पूर्वार्ध में घटकर 0.56 प्रतिशत हो गई।

उत्पादकता में गिरावट का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र में मजदूरी दर पर भी पड़ा है। 1980 में जहां मजदूरी दरों में वृद्धि 3.56 प्रतिशत वार्षिक थी, वह 1990–93 तक घटकर केवल 0.77 प्रतिशत वार्षिक रह गई। जिसके फलस्वरूप मजदूरों की क्रयशक्ति में वृद्धि नगण्य रही है जिसका प्रभाव इनकी खाद्य उपलब्धता पर

पड़ता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आंकड़ों के अनुसार कृषि उत्पादकता में वृद्धि की अपेक्षा कृषि आदानों की कीमतें ज्यादा तेजी से बढ़ रही हैं और नई तकनीकी के प्रयोग के साथ–साथ मशीनों एवं पूंजी का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। यह तत्व भी मजदूरों की क्रयशक्ति को प्रभावित करते हैं।

कृषि विशेषज्ञ एम.एस. स्वामीनाथन का मानना है कि विकास एवं जनसंख्या वृद्धि के साथ खाद्य सुरक्षा की बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए हरितक्रांति के बाद भारत को अब एक सदाबहार क्रांति की आवश्यकता है जो देश में उत्पादन, आय एवं रोजगार बढ़ाने में सहायक हो जिसके लिए हमें अपनी विकास नीति एवं कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में निदर्शनात्मक परिवर्तन करने होंगे। यह सदाबहार क्रांति कृषि व्यवस्था में ऐसे परिवर्तनों पर आधारित होनी चाहिए जिससे कि बिना किसी पर्यावरणीय एवं सामाजिक क्षति के उत्पादकों को अधिक भूमि, जल एवं श्रम संसाधन उपलब्ध कराए जा सकें। हमें भविष्य में खाद्य सुरक्षा से संबंधित प्रो. लेस्टर ब्राउन की आशंका को यदि गलत साबित करना है तो निश्चित रूप से फसल आधारित हरितक्रांति के बदले उत्कृष्ट कृषि व्यवस्था एवं नई तकनीक पर आधारित व्यापक कृषि नीति अपनानी होगी। क्योंकि उत्पादन को बढ़ाना तभी संभव होगा जबकि हम कृषि आदानों की क्षमता को बढ़ा सकें विशेषकर खाद, सिंचाई एवं उच्च उत्पादन क्षमता वाले बीजों के संदर्भ में जिसके लिए देश में अभी भी पर्याप्त संभावनाएं हैं।

सन् 2020 तक हमें 1100 लाख टन गेहूं की आवश्यकता होगी जिसे थोड़े से प्रयास के द्वारा पूरा किया जा सकता है। कृषि आदानों को बढ़ाकर गेहूं का औसत उत्पादन 27 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से बढ़ाकर 42 क्विंटल प्रति हेक्टेयर किया जा सकता है। देश में कृषि उत्पादन के लिए बीजों की खपत 1950–51 में 18,000 टन थी जो वर्तमान समय में लगभग 10 लाख टन है। यदि यह सारे बीज उच्च उत्पादकता वाले हों तो कुल खाद्यान्न उत्पादन इन्हीं संसाधनों से ही सवा गुना से भी अधिक किया जा सकता है। इसी प्रकार देश में दुनिया के सबसे बड़े बांध और सर्वाधिक विकसित नहर प्रणाली उपलब्ध हैं, बस इनके समुचित प्रयोग की आवश्यकता है।

अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान के निदेशक पिंसट्रप एंडरसन के अनुसार 2020 तक भारत अपने कुल सिंचित क्षेत्र में 170 लाख हेक्टेयर तक की वृद्धि कर सकता है। इसी संस्थान द्वारा किए गए एक दीर्घावधि अनुमान में भारतीय कृषि में धीमी वृद्धि और गरीबी खत्म करने में विफलता पर विशेष चिंता व्यक्त की गई है तथा भारत से यह आह्वान किया गया है कि वह कृषि क्षेत्र में साहसिक सुधार कार्यक्रम शुरू करे ताकि संपूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था को तत्काल विकास के रास्ते पर लाया जा सके। वित्त मंत्रालय द्वारा गठित के.पी. गीताकृष्णन कमेटी ने खाद्यसुरक्षा की दशा में सुधार के लिए खाद्य सब्सिडी घटाने, निजी क्षेत्र की भागीदारी तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली को और अधिक गरीबोन्मुखी बनाने की बात पर जोर दिया है।

इस प्रकार यदि भविष्य में हमें खाद्य सुरक्षा से संबंधित सभी आशंकाओं को निर्मूल साबित करना है तो हमें एक दीर्घकालीन नीति को अमल में लाना होगा तथा खाद्यान्नों के देशी उत्पादन को सभी प्रकार से बढ़ावा देने के साथ–साथ खाद्यान्न संभरण और वितरण प्रणाली को रोजगार और गरीबी से जोड़ना होगा तभी हम खाद्य सुरक्षा की दृष्टिकोण से एक सुरक्षित भविष्य तथा भूखमुक्त भारत की कल्पना कर सकते हैं। ❑

IAS/PCS

आरोहण

(हिन्दी माध्यम)

❋ प्रारंभिक से साक्षात्कार तक आपके साथ ❋

उपलब्ध विषय :-

- भूगोल (प्रारंभिक + मुख्य)
- दर्शनशास्त्र (सिर्फ मुख्य)
- हिन्दी साहित्य
- सामान्य अध्ययन (प्रारंभिक + मुख्य)
- निबंध

हिन्दी माध्यम के लिए बेहतर विकल्प एवम् सर्वाधिक अकंदायी विषय

एकमात्र संस्थान जो प्रारंभिक परीक्षा में सफलता की पूरी गारंटी देता है, अन्यथा फीस वापस ।

विशेष आकर्षण :-

✦ विषय चयन से संबंधित निःशुल्क मार्गदर्शनः- सिविल सेवा के अभ्यर्थियों (विशेषकर हिन्दी माध्यम) के समक्ष प्रमुख समस्या वैकल्पिक विषय के चयन, पुनः उसकी तैयारी के तौर-तरीकों की होती है । विषय का सही चयन (विशेषकर दूसरा वैकल्पिक विषय) न कर पाना ही सफलता में सबसे बड़ी बाधा है । अतः यहां के एक्सपर्ट (यदा-कदा प्रशासनिक अधिकारी भी उपस्थित रहेगें) द्वारा अभ्यर्थियों की पृष्ठभूमि, रुचि अर्थात हर पहलुओं पर गौर करते हुए निष्पक्ष मार्गदर्शन किया जाता है । यह भी संभव है कि आपको वैसे विषय के चयन का सुझाव दिया जाए जो हमारे यहां उपलब्ध न हो । अर्थात मेरे लिए आपकी सफलता सर्वोपरि है, जिसे आप खुद भी महसूस करेंगे ।

नोट : इसके लिए कार्यालय से संपर्क कर समय निश्चित कर लें ।

अन्य आकर्षण :-

✦ मुख्य परीक्षा में अधिकतम अंक प्राप्ति हेतु विस्तृत एवं गहन अध्ययन वैज्ञानिक विधि द्वारा । ✦ निश्चित समय - अंतराल पर आंतरिक परीक्षाओं का आयोजन । ✦ आंतरिक परीक्षा के टापर्स को (प्रोत्साहन के लिए) पूरी फीस तत्काल वापस । ✦ SC/ST/OBC को फीस में छूट । ✦ सिर्फ निःशुल्क कार्यशालाओं में ही नहीं, अन्य कक्षाओं में भी (निश्चित समय तक) बैठने एवं परखने की अनुमति । ✦ प्रत्येक छात्रों को व्यक्तिगत मार्गदर्शन की सुविधा ।✦ UPSC के अलावा उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, राजस्थान, मध्य-प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखंड, हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश की परीक्षाओं के लिये भी अलग से विशेष कक्षाओं का आयोजन । ✦ छात्र एवं छात्राओं के रहने की अलग-अलग व्यवस्था । ✦ नामांकन अधिकतम 30 ।

पता : 204, दूसरी मंजिल, A -23, 24 सतीजा हाउस (बत्रा सिनेमा हाल के पीछे), डा. मुखर्जी नगर, दिल्ली-9
Tel. : 011-27652362 (O) 011-35216097 (M)

निःशुल्क कक्षा प्रत्येक महीने के अंतिम रविवार को

किसान सुपर बाजार किसान के द्वार

☞ भावना ठाकुर

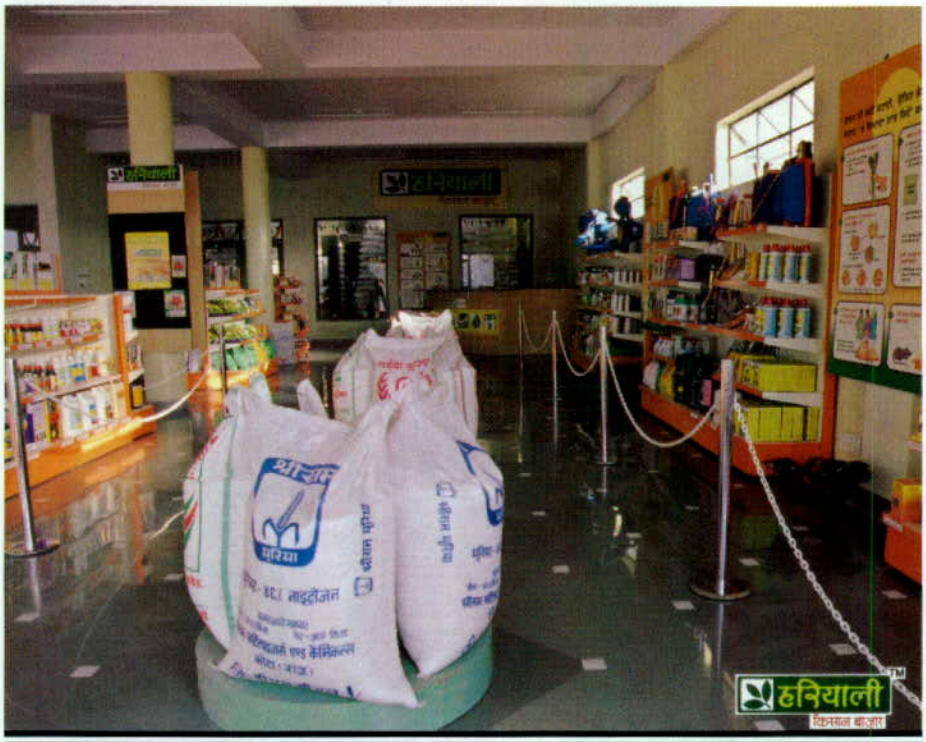

किसान हरियाली बाजार', 'किसान केंद्र', शुभ लाभ शोरूम' और 'किसान सुपर स्टोर' ये नाम उन आधुनिक डिपार्टमेंटल स्टोरों के हैं जो देश के ग्रामीण मानचित्र पर इधर बड़ी तेजी से उभर रहे हैं। हंसिया, दरांती, बीज, उर्वरक से लेकर ट्रैक्टर और क्रेडिट स्कीमों तक की बिक्री करने वाले ये कंप्टूराइज्ड स्टोर हमारे ग्रामीण भारत की ऐसी खिड़कियां हैं जिनसे हम न सिर्फ 'दूसरी हरितक्रांति' की झलक देख सकते हैं बल्कि जो हमें कृषि मार्केटिग के आलीशान भविष्य का भी आश्वासन देती हैं। अपनी चमक–दमक और सुविधाओं में महानगरों के सुपर बाजारों से होड़ लेने वाले ये किसान स्टोर लगातार अपनी तादाद बढ़ा रहे हैं और देश का निजी कार्पोरेट सेक्टर इस काम में खासा उत्साह दिखा रहा है।

'किसान हरियाली बाजार', 'किसान केंद्र', शुभ लाभ शोरूम' और 'किसान सुपर स्टोर' – क्या ये सब नाम आपको कुछ अजनबी से जान पड़ते हैं? अगर हां तो यकीनन आप दिल्ली, मुंबई जैसे किसी बड़े शहर में रहते होंगे, क्योंकि कस्बे–देहात में रहने वाले अपने किसान भाई और व्यापारी इनमें से किसी न किसी नाम को फौरन पहचान लेंगे। ये नाम उन आधुनिक डिपार्टमेंटल स्टोरों के हैं जो देश के ग्रामीण मानचित्र पर इधर बड़ी तेजी से उभर रहे हैं। हंसिया, दरांती, बीज, उर्वरक से लेकर ट्रैक्टर और क्रेडिट स्कीमों तक की बिक्री करने वाले ये कंप्टूराइज्ड स्टोर हमारे ग्रामीण भारत की ऐसी खिड़कियां हैं जिनसे हम न सिर्फ 'दूसरी हरितक्रांति' की झलक देख सकते हैं बल्कि जो हमें कृषि मार्केटिग के आलीशान भविष्य का भी आश्वासन देती हैं। अपनी चमक–दमक और सुविधाओं में महानगरों के सुपर बाजारों से होड़ लेने वाले ये किसान स्टोर लगातार अपनी तादाद बढ़ा रहे हैं और देश का निजी कार्पोरेट सेक्टर इस काम में खासा उत्साह दिखा रहा है।

किसान स्टोर के ब्यौरे में जाने से पहले आइए पहले ग्रामीण अर्थतंत्र में उनकी भूमिका को समझें। देश के कृषि रणनीतिकारों ने मोटे तौर पर दो चीजों को भारतीय किसान की सबसे बड़ी समस्याओं के रूप में पहचाना है। पहली समस्या है किसान अपनी उपज को खलिहान से मंडी तक कैसे पहुंचाए यानी 'सड़क–कोल्ड स्टोर–गोदाम' का ऐसा नेटवर्क कैसे तैयार हो जो किसान को बिचौलिए आढ़तियों और व्यापारियों के शोषण से निजात दिला सकें। दूसरी समस्या है किसान खेतीबाड़ी के लिए जरूरी बेसिक चीजें ज़ैसे बीज, खाद, औजार, ट्रैक्टर, पुर्जे, कीटनाशक और पंप वगैरह कहां से खरीदे। इन वस्तुओं को जुटाने के लिए किसान भाईयों को बहुधा राज्य के एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा करनी पड़ती है। 'एग्रीकल्चर इनपुट' वर्ग में आने वाली इन तमाम वस्तुओं के अलावा किसान बिरादरी को कृषि कर्जों और खेतीबाड़ी से जुड़ी अत्याधुनिक इंटरनेट सुविधाओं की भी जरूरत हो सकती है इसीलिए उनका भी इंतजाम किसी ऐसी जगह पर करना जरूरी है जो गांव–कस्बे के नजदीक यानी किसानों

की आसान पहुंच के भीतर हो। हमारे ये 'किसान सुपर स्टोर' भारतीय कृषक की इस दूसरी सबसे अहम समस्या का समाधान बनकर उभर रहे हैं।

वास्तव में इन स्टोरों को ग्रामीण भारत के रीटेल क्रांति अग्रदूतों के रूप में देखा जा सकता है। वे गांव–देहात के फुटकर बाजारों की काया पलट रहे हैं। जरा देश के ग्रामीण बाजार के पारंपरिक प्रोफाइल पर नजर डालिए। तकरीबन छह लाख गांवों वाले इस ग्रामीण भारत के मौजूदा मार्केटिंग ढांचे में लगभग 47 हजार हाट और सात हजार कमीशन आधारित मंडियां हैं। इनके अलावा धार्मिक जमावड़ों के रूप में लगने वाले तकरीबन 25 हजार मेले भी हैं। ये हाट, मंडियां और मेले मिलकर भी ग्रामीण भारत की फुटकर मांग का एक छोटा हिस्सा ही पूरा कर पाते हैं क्योंकि उनमें ट्रैक्टर, पंप, स्पेयर पार्टस और ऋण स्कीमों जैसी चीजों की बिक्री अमूमन नहीं होती। इस पारंपरिक मार्केटिंग व्यवस्था के समांतर ग्रामीण भारत में लगभग चार लाख फुटकर दुकानें भी परचून की हैं, उनके बाद जनरल स्टोर (15 फीसदी) केमिस्ट (पांच फीसदी) और फिर अन्य वर्ग की दुकानों का नंबर आता है। इस विराट ग्रामीण बाजार तंत्र में साबुन, टूथपेस्ट, शैम्पू जैसी 'फास्ट मूविंग कंज्यूमर गुड्स' (एफएम सीजी) वर्ग की तेज रफ्तार उपभोक्ता वस्तुओं की हर साल 50 हजार करोड़ रुपये की कारोबारी मांग मौजूद है और साथ ही पांच हजार करोड़ रुपये की टिकाऊ वस्तुओं (जैसे फर्नीचर) की मांग भी है। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण लगभग 52 हजार करोड़ रुपये की सालाना मांग खेतीबाड़ी के साधनों (बीज, खाद, मशीनों) की है जिसकी आपूर्ति पारंपरिक मार्केटिंग तंत्र से नहीं हो पाती। इस शून्य को भरने के लिए किसानों को समर्पित सुपर स्टोरों और किसान केंद्रों का आधुनिक मार्केटिंग नेटवर्क उभर रहा है। उपरोक्त सभी आंकड़े राष्ट्रीय व्यावहारिक आर्थिक अनुसंधान परिषद (एनसीएईआर) और 'इंडिया इन्फोलाइन डॉट काम' जैसे विश्वसनीय सर्वेक्षण संस्थानों के हैं। इन्हीं आंकड़ों की रोशनी में किसान सुपर बाजारों की अहमियत और योगदान को समझा जा सकता है।

देखा जाए तो आज देश को 'जय जवान–जय किसान' जैसे नारों से ज्यादा ऐसे सुपर बाजारों की जरूरत है जो किसान को अपने गांव–कस्बे की दहलीज पर ही बीज–खाद दिलवा सकें। कृषि रणनीतिकार अक्सर इस बात का रोना रोते हैं कि देश की कुल निर्यात आय में कृषि उत्पादों का योगदान सिर्फ 18 फीसदी पर ठिठका हुआ है। आकलन यह है कि अगर कृषि फूड प्रोसेसिंग की संभावनाओं का ठीक से दोहन हो तो यह आंकड़ा दुगुना हो सकता है। पंजाब में पेप्सी प्लांट का प्रयोग साबित कर चुका है कि ऐसे कृषि संयंत्र रोजगार और पैदावार के नजरिए से आसपास के इलाके का कायाकल्प कर देते हैं। लेकिन इसके लिए मशीनी खेती और आधुनिक एग्रो कारखानों के एक विराट नेटवर्क की जरूरत होगी जिसकी रोजमर्रा की जरूरतें आधुनिक एग्रो डिपार्टमेंटल स्टोरों और किसान सुपर बाजारों की मार्फत ही पूरी की जा सकेंगी। दूसरे शब्दों में, आधुनिक कृषि के हमारे सभी स्वप्नों में इन किसान सुपर बाजारों की निश्चित तौर पर एक सार्थक भूमिका रहेगी।

आइए, अब थोड़ा ब्यौरा देखें। पहले अगर निजी सेक्टर की बात करें तो वहां सबसे ताजा प्रयास श्रीराम उद्योग समूह की कंपनी डीएससीएल की हरियाली किसान बाजार श्रृंखला कर रही है। 'हरियाली किसान बाजार' ऐसे सुपर स्टोर हैं जिनमें दरांती से लेकर हार्वेस्टर–ट्रैक्टर तक का सौदा मुमकिन है। वहां करीब 30 ब्रांड के कीटनाशक और स्पेयर पार्ट्स उपलब्ध हैं। यहां ओसवाल फर्टिलाइजर्स, रैलीज, पेस्ट इंडिया, अवान्तीस, धानुका मॉनसेंटो, मेहको, दयाल इंडस्ट्रीज जैसी कंपनियों के उत्पादों की आपूर्ति हो रही है। साथ ही ऑफ्टर

सेल सर्विस, प्रशिक्षण, बैंक कर्ज और फसल बीमा से जुड़ी जानकारी देने के लिए काउंटर भी बने हैं। पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में कंपनी 'हरियाली बाजार' खोलने की शुरूआत कर चुकी है जबकि इस मुहिम का आरंभ कंपनी ने सिर्फ डेढ़ साल पहले जुलाई 2002 में किया था। आज मेरठ, कोटा, शारजहांपुर और फिरोजपुर जैसे क्षेत्रों में ये 'हरियाली बाजार' पचास कि.मी. के दायरे के किसानों को आकर्षित कर रहे हैं। दस हजार वर्ग फीट तक के क्षेत्रफल में बने ये स्टोर वाकई इतने आलीशान हैं कि शहरों में रहने वाले उनसे ईर्ष्या कर सकते हैं।

निजी क्षेत्र का दूसरा प्रयास 'महिंद्रा एंड महिंद्रा' कंपनी के 'शुभ लाभ' शोरूम हैं जिनमें ट्रेक्टर और दूसरे मशीनी उपकरणों की नुमाइश और बिक्री होती है। उर्वरकों के निर्माण में अग्रणी टाटा कैम कंपनी के 'किसान केंद्र', डिर्पाटमेंटल स्टोर भी कीटनाशकों और उर्वरकों की ऐसी ही आधुनिक झांकी पेश करते हैं। इसी तरह रैलीज इंडिया के किसान केंद्र भी विभिन्न ब्रांड के कृषि उत्पाद किसान उपभोक्ता के समक्ष परोसते हैं।

सरकारी क्षेत्र में 'इफको' भारतीय किसान व खाद सहकारी संघ ऐसी कंपनी है जो बीमा क्षेत्र में झंडे गाड़ने के बाद अब 'सुपर स्टोर चेन' के मैदान में कूद पड़ी है। कंपनी का इरादा औरों से बेहतर कंप्यूटरीकरण के बूते मार्केटिंग और 'खरीद आपूर्ति प्रबंधन' पर ज्यादा ध्यान देने का है। वास्तव में छह हजार करोड़ से ज्यादा के सालाना कारोबार वाली इफको कंपनी ने वर्ष 2010 के लिए अपना एक एग्रो–मार्केटिंग परियोजना का खाका तैयार किया है। ये सुपर स्टोर उसी परियोजना के हिस्से होंगे। आरंभ में कंपनी देश के सभी कस्बों में ऐसे सुपर स्टोर खोलेगी, बाद में इन्हें तालुका मुख्यालय क्षेत्रों और अर्ध–शहरी इलाकों तक फैलाया जाएगा। बेशक, इफको जैसी हैवीवेट कंपनी का यह विराट प्रोजेक्ट जब अपने शबाब पर आएगा तो निजी क्षेत्र के डिपार्टमेंट स्टोरों को वह जबर्दस्त चुनौती देगा।

इन तमाम 'एग्रो स्पेशलिटी' स्टोरों को ग्रामीण भारत में घट रही एक दूसरी क्रांति से जोड़कर देखना बड़ा महत्वपूर्ण है। यह सूचना तकनीक क्रांति है। आईटीसी सरीखी कंपनियों ने देश के गांवों में 'ई–चौपाल' जैसी सेवाएं शुरू की है। ये 'ई–चौपाल' वास्तव में नन्हें ग्रामीण साइबर कैफे हैं जहां किसान इंटरनेट के जरिए देश की ही नहीं, विदेशी मंडियों के भाव भी चढ़ते–उतरते देख सकता है। 'ईआईडीपेरी' नामक कंपनी ने भी 'इंडिया एग्रीलाइन' बैनर के तले ऐसी ही इंटरनेट सेवा शुरू की है। यही काम अमूल डेयरी के पोर्टल कर रहे हैं। इन नन्हें ग्रामीण साइबर कैफों में एक कंप्यूटर सिस्टम से गांव के सैकड़ों किसान इतनी जानकारी हासिल कर सकते हैं कि बाजार में कोई बिचौलिया व्यापारी उनका शोषण न कर सके और वे हक के साथ अपनी उपज का वाजिब दाम हासिल कर सकें। गौरतलब बात यह है कि ऐसी ही इंटरनेट सुविधा ये सुपर बाजार भी उपलब्ध करा रहे हैं जिससे किसान भाई खरीदारी के साथ–साथ अपनी जानकारी में इजाफा भी कर सकते हैं। इस तरह अगर सरकार उनका दोहन करे तो किसान सुपर स्टोर ग्रामीण सूचना क्रांति में भी अहम योगदान दे सकते हैं।

एक और बात, हमें इन किसान सुपर बाजारों को उस बड़े कृषि एजेंडा के अंग के रूप में देखना होगा जो केंद्र सरकार ने इधर पेश किया है। वित्त मंत्री जसवंत सिंह ने जनवरी में अपना मिनी बजट पेश करने के फौरन बाद देश के सामने 'दूसरी हरित क्रांति' का खाका पेश कर दिया है। इसी तरह नाबार्ड (भारतीय कृषि विकास और पुनर्निर्माण बैंक) के जरिए अगले कुछ वर्षों में तकरीबन 50 हजार करोड़ रुपये की धनराशि सस्ती ब्याज दर पर ग्रामीण आबादी को उपलब्ध कराई जानी है। इसका एक बड़ा हिस्सा सहकारी प्रबंधन, कृषि उत्पाद भंडारण, कोल्ड स्टोर ढांचे और गोदामों के विकास में खर्च होगा। इतनी ही गंभीरता सरकार 'ग्रामीण अवस्थापना विकास कोष (रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट फंड) की ओर दिखा रही है। इन योजनाओं के साथ–साथ हमारा ध्यान एनसीएईआर की 'भारतीय बाजार आबादी रिपोर्ट' के उस निष्कर्ष पर भी होना चाहिए जिसके मुताबिक ग्रामीण भारत में 45 हजार रुपये से लेकर 2.15 लाख रुपये सालाना वाले मध्यवित्त उपभोक्ता परिवारों की संख्या शहरी क्षेत्रों के ऐसे परिवारों की संख्या के बराबर पहुंच गई है और कुछेक वर्षों में ही वह उससे आगे बढ़ जाएगी। एक निष्कर्ष यह है कि ग्रामीण भारत में 'खर्च करने योग्य आय' का आंकड़ा शहरी भारत के आंकड़ें से खासा अधिक है। वर्ष 2001–02 में भारतीय जीवन बीमा निगम (एलआईसी) ने अपनी 55 फीसदी पॉलिसियां ग्रामीण क्षेत्रों में बेचीं। भारतीय संचार निगम लिमिटेड (बीएसएनएल) के लगभग 20 लाख मोबाइल उपभोक्ताओं में से आधे से ज्यादा कस्बे–देहात में रहते हैं। किसान क्रेडिट कार्ड रखने वाले पौने तीन करोड़ किसानों की आबादी शहरों के कुल 'क्रेडिट कार्ड – डेबिट कार्ड' रखने वाले पौने दो करोड़ लोगों की आबादी से कहीं ज्यादा भारी–भरकम है।

ये आंकड़े क्या दर्शाते हैं? जाहिर तौर पर ये हमें ग्रामीण बाजार और ग्रामीण मांग का उज्जवल भविष्य दिखाते हैं। अकारण नहीं कि इस विराट मांग के दोहन के लिए कार्पोरेट दुनिया में होड़ मची है। हिंद लीवर, बजाज इलेक्ट्रिकल्स, खेतान फैन्स, कोलगेट पामोलीव, अपोलो टायर्स, बजाज आटो जैसे कंपनियां ग्रामीण मांग के दोहन के लिए मोबाइल वीडियो विज्ञापन वैन यानी चलती–फिरती गाड़ियों के जरिए अपने उत्पादों का प्रचार कर रही हैं। वे अपना सामान बेचती हैं और किसानों को फिल्में और चित्रहार दिखाती हैं। बेवजह नहीं कि हर दूसरा विज्ञापन आज देहाती उपभोक्ता की भाषा बोलता दिखता है!

किसान सुपर बाजारों को ग्रामीण बाजार की इन असीम संभावनाओं के तार्किक हिस्से के रूप में देखना होगा। ये किसान स्टोर बिना मिलावट के, मार्के वाली पुख्ता ब्रांडशुदा चीजें उपलब्ध कराने में अहम भूमिका निभाने जा रहे हैं। ये बाजार के किसान के कदमों तक झुकने के सबूत हैं। वे कार्पोरेट दुनिया के ग्रामीण दुनिया के समक्ष नतमस्तक होने के प्रमाण हैं। वैसे भी जिस देश की दो–तिहाई आबादी को अपनी रोजी–रोटी खेती–बाड़ी से मिलती हो और जहां सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का एक–तिहाई हिस्सा कृषि के योगदान से आता हो, वहां ऐसी हर पहल का स्वागत होना चाहिए जो किसानों के सम्मान और सुविधाओं में इजाफा करती हो। ❑

सी–51, तुलसी अपार्टमेंट,
सेक्टर–14, रोहिणी,
दिल्ली – 110085.

कृषि क्षेत्र में नई संभावनाओं के द्वार खोलती पराजीवी फसलें

☞ प्रदीप कुमार मुखर्जी

अब देश की सबसे बड़ी बीज कंपनी माहिको (महाराष्ट्र हाईब्रिड सीड कंपनी) को बी टी कपास को उगाने और उसके क्षेत्र परीक्षण करने में सफलता मिल चुकी है। इन सफल क्षेत्र परीक्षणों के बाद अब बी टी कपास को भारत में व्यावसायिक तौर पर उगाने की मंजूरी जी ई ए सी द्वारा 20 मार्च, 2002 को प्रदान की जा चुकी है। कृषि क्षेत्र में इससे निस्संदेह नई संभावनाओं के द्वार खुल गए हैं। आशा है, अब अन्य पराजीवी फसलें भी देश की धरती पर जल्दी ही लहलहाती नजर आएंगी।

फसलों को कीटों, बीमारियों और खरपतवार आदि से बचाने के लिए उन पर कीटनाशकों और खरपतवारनाशकों का छिड़काव किया जाता है लेकिन इन छिड़कावों द्वारा मिट्टी, हवा, पानी के अलावा फसलों में भी रसायन अपना जहरीला असर छोड़ते हैं। कीटनाशकों आदि के अंधाधुंध प्रयोग के चलते आज हालत यह है कि न केवल सब्जियों और फलों में बल्कि अन्यान्य खाद्य पदार्थों में भी कीटनाशकों के अवशेष देखने को मिलते हैं। यहां तक कि मां का दूध और शहद भी इनके असर से नहीं बच पाए हैं।

पौधों में कीटों व रोग प्रकोपों की रोकथाम के लिए प्रयुक्त होने वाले कीटनाशकों के दुष्प्रभावों को देखते हुए जैव प्रौद्योगिकी–विदों ने आनुवांशिक इंजीनियरी (जैनेटिक इंजीरियरिंग) की तकनीकों का सहारा लेकर पराजीवी (ट्रांसजेनिक) फसलों को उगाने की दिशा में पहल की। पौधों में पराए जीन डालकर पराजीवी फसलों को उगाने में उन्हें सफलता मिली। ये पराजीवी या जीनांतरित (जेनेटिकली मॉडीफाइड) फसलें बहुगुणी साबित हुई हैं। इनमें रोग और कीट प्रतिरोधक क्षमता तो होती ही है, अधिक उपज देने में भी ये सक्षम होती हैं।

पराजीवी फसलों के लाभों को देखते हुए विश्व के अनेक देशों जिनमें अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, मैक्सिको, दक्षिण अफ्रीका, फ्रांस और चीन आदि शामिल हैं, में इनको उगाया जा रहा है। हालांकि पराजीवी फसलों को उगाने को लेकर पर्यावरणविद् और पर्यावरण संरक्षण आंदोलन से जुड़े लोग विरोध भी कर रहे हैं, पर इनके फायदों को देखते हुए इनके क्षेत्रफल का दायरा दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। **उल्लेखनीय है कि 1996 में विश्व भर में पराजीवी फसलों का क्षेत्रफल मात्र सत्रह लाख हेक्टेयर था जो 2001 में बढ़कर लगभग पांच करोड़ हेक्टेयर हो गया।** अकेले चीन में ही करीब एक लाख हेक्टेयर में पराजीवी फसलें उगाई जा रही हैं।

पौधों में जीवों का प्रवेश

पराजीवी फसलों को विकसित करने में जो जीन पौधों में प्रविष्ट कराए जा रहे हैं उनमें कीटरोधी, रोगरोधी एवं खरपतवाररोधी जीन ही प्रमुख हैं क्योंकि कीटों, रोग प्रकोपों और खरपतवारों के कारण ही फसलों को सबसे अधिक नुकसान झेलना पड़ता है। इनके अलावा और भी तरह की जीनों को पौधों पर आजमाया गया है।

कैलीफोर्निया स्थित 'डीएनए प्लांट टेक्नोलॉजी' की एक प्रयोगशाला से जुड़े कुछ शोधकर्ताओं को मछली के जीव को टमाटर और तंबाकू के पौधों में डालने में सफलता मिली। मछली में स्थित यह जीव एक खास किस्म का प्रोटीन बनाता है जो हिम शीतल पानी में भी मछली को जमने से बचाए रखता है। अतः ये जीवांतरित टमाटर और तंबाकू की फसलें भीषण ठंड और पाले भरे मौसम को झेलने में भी सक्षम होती हैं।

जुगनू की चमक पैदा करने वाले जीव को भी तंबाकू और कुछ अन्य पौधों में डाला गया है। चीनी वैज्ञानिकों को तंबाकू के पौधों में एक खास जीव को प्रविष्ट कराने में सफलता मिली है। यह जीव 'टोबैको मोजैक वायरस' नामक विषाणु के आवरण प्रोटीन को नष्ट कर तंबाकू को इस विषाणु द्वारा पैदा किए जाने वाले रोग से बचाता है। खीरे और टमाटर में मोजैक वायरस तथा आलू के पतमोड़क विषाणु के विरुद्ध भी जीव आजमाए गए हैं।

बी टी विष

पौधों को कीटरोधी बनाने के लिए बिच्छू, मकड़ी व कुछ जीवाणुओं के जहर पैदा करने वाले जीव उनमें प्रविष्ट कराए गए हैं। इनमें से बेसीलस थूरिंजिएंसिस (बी टी) नामक जीवाणु के जीन का ही सबसे अधिक उपयोग

किया गया है।

उल्लेखनीय है कि बीटी मिट्टी में निवास करने वाला एक ग्राम नेगेटिव जीवाणु है जिसके अनेक प्रभेद (स्ट्रेन) पाए जाते हैं। ये प्रभेद अलग–अलग किस्म के विषाक्त प्रोटीनों का निर्माण करते हैं जो क्रिस्टल रूप में पौधों की कोशिका भित्ति पर पाए जाते हैं। इन विषाक्त प्रोटीनों का निर्माण बीटी जीवाणु में मौजूद 'क्राई 1ए सी' नामक जीव द्वारा होता है।

बीटी क्रिस्टल प्रोटीन हानिकारक कीटों की आंतों में प्रविष्ट कर वहां के क्षारीय माध्यम द्वारा प्रभावी टॉक्सिन में बदलकर इन कीटों का काम तमाम कर डालते हैं। गौरतलब है कि इंसानों व अन्य स्तनधारियों के उदर में मौजूद अम्लीयता के कारण ये क्रिस्टल प्रोटीन एंडोटॉक्सिन में नहीं बदल पाते।

अनुमान है कि अब तक कीटों की दस लाख से अधिक प्रजातियों को पहचाना जा चुका है। इनमें से दस हजार ही समस्याएं पैदा करने वाली होती हैं। फसलों के लिए गंभीर समस्याएं पैदा करने वाले हानिकारक कीट तो मुश्किल से 100 के करीब ही हैं। अधिकतर कीटों पर तो प्रकृति ही बिना मानव की सहायता के नियंत्रण करती है। नहीं तो सोचिए कि कीटों की इतनी विशाल फौज पर नियंत्रण कर पाना क्या रासायनिक या अन्य उपायों से संभव हो पाता? लेकिन **कीटों के रासायनिक नियंत्रण में जहां पर्यावरण पर दुष्प्रभाव पड़ता है वहीं जैव नियंत्रण तरीके पर्यावरण हितैषी माने जाते हैं। अतः जी टी टॉक्सिन कीटों के जैव नियंत्रण में बहुत कारगर साबित हो सकते हैं।**

जी टी जीवाणु के अलग–अलग प्रभेद फसलों के लिए हानिकारक अलग–अलग कीटों पर हमला करते हैं, पर मित्र कीट बचे रहते हैं। इनमें से कुछ प्रभेद पतंगों (मांथ) और बीटल कीटों का सफाया करते हैं तो कुछ लेपिडोप्टेरा कुल के कीटों का। कुछ प्रभेद सूत्रकृमि, फीताकृमि तथा प्रोटोजोआ की कुछ किस्मों को भी नियंत्रित करते हैं। बीटी जीवाणु के कुछ प्रभेद कपास की फसल को हानि पहुंचाने वाले बॉलवर्म (हेलिवर्पा) तथा तंबाकू की फसल के लिए नुकसानदायक बडवर्म (हेलियोथिस) को भी नियंत्रित करते हैं।

उल्लेखनीय है कि बीटी की खोज पहले–पहल 1902 में की गई थी। अब तक बी टी के विभिन्न प्रभेदों में अस्सी से अधिक जीव विष पैदा करने वाले 'क्राई 1 ए सी' जीन खोजे जा चुके हैं। इनको पौधों में डालकर व्यापारिक फसलों की विभिन्न पराजीवी कीटरोधी किस्में विश्व भर में विकसित की जा चुकी हैं।

इन फसलों की शुरूआत कपास से हुई। सर्वप्रथम अमेरिका और आस्ट्रेलिया में ही 1996 में बी टी कपास उगाई गई। वर्तमान में इन दोनों देशों में करीब 20 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में बी टी कपास उगाई जा रही है। देखादेखी चीन, मैक्सिको और दक्षिण अफ्रीका में भी बी टी कपास की खेती शुरू की गई। बी टी कपास के अलावा जी टी मक्का और बी टी आलू की भी खेती की जा रही है। आजकल बी टी धान पर परीक्षण चल रहे हैं।

निस्संदेह बी टी विष एक उपयोगी जैव कीटनाशक है जो समेकित कीट प्रबंधन कार्यक्रम में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है तथा कार्बनिक खेती में रूचि रखने वाले किसानों के लिए भी उपयोगी साबित हो सकता है। जैव नियंत्रण प्रणाली रासायनिक कीटनाशियों द्वारा पर्यावरण व जीव–जंतुओं पर होने वाले दुष्प्रभावों से भी बचाव कर सकती है। लेकिन फिलहाल कीट नियंत्रण के लिए बी टी विष वाले जीवाणुओं का छिड़काव रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में करीब चार गुना महंगा साबित हो रहा है। अतः फसलों पर किए जाने वाले बी टी स्प्रे के खर्चे को कम करने के लिए अनुसंधान और समुचित उपाय किए जाने जरूरी हैं।

बी टी खेती को लेकर विवाद

जहां बी टी खेती के इतने फायदे हैं वहीं इसको लेकर आशंकाएं भी हैं तथा कुछ विवाद भी खड़े हुए हैं। ये आशंकाएं और विवाद विशेष रूप से 1994 के दौरान चर्चा में आए जब कार्नेल विश्वविद्यालय की एक रिपोर्ट में यह कहा गया कि बी टी कपास के विषाक्त पराग को खाने से मोनार्क तितलियों की मृत्यु हुई। पराजीवी फसलों से जुड़ी बहस को इस रिपोर्ट ने नए सिरे से हवा दी। वैज्ञानिकों व पर्यावरणविदों ने अपनी आशंकाएं यह कहकर व्यक्त की कि पराजीवी फसलें भविष्य में पर्यावरण और जैवविविधता को प्रभावित कर सकती हैं। कीटों में बी टी जैविक विष के प्रति रोधकता भी विकसित होने की संभावनाएं व्यक्त की गईं। आशंका जताई गई कि अगर उच्च–प्रतिरोधक क्षमता वाले कीटों के प्रकार विकसित हो गए तो कृषि व्यवस्था के डांवाडोल होने के आसार भी उत्पन्न हो सकते हैं। लेकिन इन सभी आशंकाओं और विवादों की अभी वैज्ञानिक तौर पर पुष्टि बाकी है। वैज्ञानिक अभी यह बता पाने में समर्थ नहीं हैं कि मिट्टी में प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला बी टी जीवाणु आखिर पर्यावरण और कृषि व्यवस्था को किस तरह से क्षति पहुंचा सकता है?

भारत में बी टी कपास

भारत में भी बी टी कपास को उगाने को लेकर शुरू–शुरू में बड़ा विवाद उठ खड़ा हुआ था। इस विवाद के पीछे तर्क यह दिया गया कि बी टी युक्त कपास के बिनौले का तेल खाने पर मनुष्य पर जाने क्या प्रभाव पड़ेगा या जानवरों को इसकी खली खिलाई गई तो क्या होगा? यह विवाद गुजरात के नौ जिलों में 1100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में गैरकानूनी तरीके से उगाई गई बी टी कपास की खेती से चरमसीमा पर जा पहुंचा था।

दरअसल, भारत सरकार द्वारा स्थापित जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी (जी ई ए सी) द्वारा आवश्यक मंजूरी से पहले ही नवभारत बीज कंपनी ने बी टी कपास के बीज गुजरात के किसानों को बेच दिए थे। अतः इस कंपनी के खिलाफ कार्यवाही कर इस फसल को जलाने के आदेश दिए गए थे। लेकिन अब देश की सबसे बड़ी बीज कंपनी माहिको (महाराष्ट्र हाईब्रिड सीड कंपनी) को बी टी कपास को उगाने और उसके क्षेत्र परीक्षण करने में सफलता मिल चुकी है। इन सफल क्षेत्र परीक्षणों के बाद अब बी टी कपास को भारत में व्यावसायिक तौर पर उगाने की मंजूरी जी ई ए सी द्वारा 20 मार्च, 2002 को प्रदान की जा चुकी है। कृषि क्षेत्र में इससे निस्संदेह नई संभावनाओं के द्वार खुल गए हैं।आशा है, अब अन्य पराजीवी फसलें भी देश की धरती पर जल्दी ही लहलहाती नजर आएंगी। ❑

43, देशबंधु सोसाइटी
पटपड़गंज,
दिल्ली 110092

कृषि में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कितना सार्थक

☞ जितेंद्र सिंह

आज भारतीय कृषि को 'ज्यादा उत्पादन के साथ टिकाऊ उत्पादन' का नारा देने की आवश्यकता आ पड़ी है जिससे हमारे जीवन का आधार प्राकृतिक संसाधन जल, जमीन, जंगल, वायु और वातावरण पुनः अपनी वास्तविक स्थिति में लौट सकें और मानव जीवन के साथ-साथ धरती के समस्त प्राणियों का कल्याण हो सके।

दुनिया के दूसरे लोग चाहे जो समझें, कृषि हम भारतीयों के लिए जीविकोपार्जन का साधन या व्यवसाय मात्र नहीं है। कृषि ही हमारा जीवन है, कर्म है और यही हमारी जीवनपद्धति एवं जीवनशैली है, जो हमारे खून के साथ-साथ हमारी सभ्यता, संस्कृति और संस्कारों में रची-बसी है। सदियों से हमारी संस्कृति, त्योहार, परंपराएं, उद्योग, व्यावसायिक गतिविधियां, सभी समुदाय और सभी धर्म किसी न किसी तरह से कृषि से जुड़े रहे हैं। सच तो यह है कि हमारे जीवन के सभी पहलुओं पर कृषि की गहरी छाप है। आज भी देश की दो तिहाई से अधिक आबादी गांवों में निवास करती है और देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर किसी न किसी रूप में निर्भर है। हमारे सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान लगभग 25 प्रतिशत है इसलिए कृषि को भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवनरेखा कहा जाता है।

लेकिन बड़े दुर्भाग्य की बात है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवनरेखा आज मृत्युरेखा में तब्दील होती नजर आ रही है। दिन-दूनी रात चौगुनी होती जनसंख्या वृद्धि के कारण खाद्यान्नों, दलहनों, तिलहनों, सब्जी, फल-फूल आदि की पूर्ति के लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि रसायनों का प्रयोग हमारी मजबूरी बनती जा रही है और यह मजबूरी कृषि योग्य मृदा को ही सिर्फ बदतर नहीं बना रही बल्कि वो सभी प्रकार के कृषि उत्पादों, वायु, जल एवं वातावरण को भी प्रदूषित व कलुषित कर रही है। यही नहीं बल्कि यह गाय-भैंस के दूध के साथ-साथ नवजात शिशुओं और मां के दूध को भी अमृत से विष में तब्दील कर रही है। आज न इस प्रकार का कृषि उत्पादन करने वाला चैन की नींद सो पा रहा है और न ही इसका उपभोग करने वाला। आज मानव में जटिल से जटिल बीमारियां इन्हीं खाद्यान्नों और दूध के सेवन से पैदा हो रही हैं।

कभी हम भारतीयों को संसार में वीरता, साहस और धैर्य का पर्याय माना जाता था लेकिन आज स्थिति शायद पूरी तरह बदलती हुई नजर आ रही है। आज कृषि रसायनों की खाद्यान्नों में भारी मात्रा में उपस्थिति और इसके उपभोग से मानव का मन ही कमजोर और विकृत होता नजर आ रहा है। आज

साहस, धैर्य और संतोष विरलों में ही देखने को मिलता है। आज लोगों के मन में विपरीत परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता नहीं रह गई है। पहले ऐसे कमजोर दिल के लोग समाज या परिवार में इक्के–दुक्के ही नजर आते थे जो विपरीत परिस्थितियों से न लड़ पाने के कारण आत्महत्या का रास्ता चुन लेते थे लेकिन आज तो थोड़ी–सी विपरीत परिस्थितियां उत्पन्न होने पर पूरा का पूरा परिवार ही सामूहिक आत्महत्या जैसा दुस्साहसिक कदम उठा लेता है।

ऐसा नहीं है कि सारी की सारी समस्याएं और परिस्थितियां अभी ही कुछ वर्षों में पैदा हुई हैं। आज से पहले भी लोगों के सामने विपरीत परिस्थितियां थीं और आज से कहीं जटिल परिस्थितियां लोगों के सामने थीं। आजादी के कुछ दशकों बाद तक बहुत से लोगों को दो जून की रोटी तक समय से नहीं मिल पाती थी और लोग आधा पेट खाकर सोने को मजबूर थे। उस समय मानव का शरीर दुबला–पतला और जीर्ण–शीर्ण जरूर दिखता था लेकिन अंदर से उनका मन मजबूत और कठोर होता था क्योंकि वह एक जून की रोटी और छटाक भर दूध शरीर के नाड़ी तंत्र में खून का संचार कर शरीर को ऊर्जावान और निरोगी बनाता था। आज की तरह भरपेट भोजन शरीर और मन को विकृत नहीं करता था। आज भोज्य पदार्थों का सेवन ठीक उसका उल्टा असर शरीर में पैदा कर रहा है। **दिखने में शरीर तो स्वस्थ दिखता है लेकिन मन अंदर से उतना ही दुर्बल और कमजोर होता है। सभी प्रकार की शारीरिक और मानसिक दुर्बलता का प्रमुख कारण कृषि में असंतुलित मात्रा में प्रयोग हो रहे उर्वरक एवं कृषि रसायन ही हैं।**

उर्वरकों के प्रयोग की शुरूआत

जब हमारा देश आजाद हुआ, उस समय देश का कुल खाद्यान्न उत्पादन 48 मिलियन टन के करीब था। एक देश के दो देश में बंटने के कारण पूरे देश में भारी उथल–पुथल हुई। इससे देश आर्थिक, सामाजिक एवं व्यापारिक दृष्टिकोण से बहुत अधिक प्रभावित हुआ और आगामी कुछ वर्षों में देश का खाद्यान्न उत्पादन और भी गिर गया। अब देश आजाद होने के कारण चुनी हुई प्रथम लोकप्रिय सरकार के सामने सबसे बड़ी समस्या लोगों को दो जून की रोटी मुहैया कराने के साथ–साथ देश को नए तरीके से पुर्नस्थापित करना, लोगों के दिलों को जोड़ना, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से देश को सुदृढ़ बनाना आदि थीं। लेकिन उन सब में सर्वोपरि समस्या थी लोगों को भूख से छुटकारा दिलाना।

सरकार ने साठ के दशक में हरितक्रांति की घोषणा की जिससे कृषि क्षेत्र में आधुनिकीकरण की शुरूआत हुई और कृषि की नई विद्या, नए कृषि यंत्र, रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि रसायनों के प्रयोग पर बल दिया जाने लगा। इनमें नत्रजन उर्वरक यूरिया की शुरूआत सबसे पहले हुई। कहते हैं, भारतीय किसानों की सोचने की शक्ति असाधारण है, वह चार–छह दशक पहले की बात का अनुमान भी आसानी से लगा लेता है। शायद इसीलिए उस समय इन उर्वरकों के प्रयोग के लिए किसानों को समझाने एवं रिझाने के लिए सरकार को एवं विभाग से जुड़े अधिकारियों और कर्मचारियों को नाको चने चबाने पड़ते थे। फिर भी, किसान इनके प्रयोग की हामी भरने से या तो मना कर देता था या फिर 'हां' कर बाद में बदल जाता था। तब कृषि अधिकारी एवं कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं ने इसके लिए एक उपाय सोचा। रात्रि के समय चोरी–छिपे वे इस खाद का किसानों के खेत में खड़ी फसल में छिड़काव कर और खाली बोरी को उसी खेत में छोड़कर चले जाते थे। उस समय यह सब देखकर किसान सकते में आ जाते थे और यह सोचते थे कि कोई उनके खेत की मिट्टी को और उनकी फसल को बर्बाद करने के लिए यह सब कर रहा है। लेकिन यह सब भ्रम उनका कुछ दिनों एवं कुछ महीनों में ही दूर हो जाता था। जब खाद पड़े खेत में हरियाली होती थी और उन खेतों की तुलना में अधिक उपज प्राप्त होती थी, जिन खेतों में इस प्रकार की खाद नहीं पड़ी होती थी। बस यहीं से किसानों ने अधिक उपज लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग शुरू कर दिया और स्थिति यह हो गई कि आज शायद ही कोई किसान ऐसा होगा जो रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग न करता हो। किसानों का आज से 40–45 वर्ष पहले वाला डर कि यह रासायनिक उर्वरक उनके खेत की माटी एवं फसल को बर्बाद न कर दे, आज सच होकर सबके सामने दिखाई दे रहा है। **जहां देश में साठ के दशक में मात्र 292 हजार टन उर्वरक उपयोग किया जाता था, वहीं आज सन् 2001–2002 में बढ़कर 17,360 हजार टन पहुंच गया है। इस आंकड़े के मुताबिक यदि यह कहा जाए कि भारत में आज केमिकल फार्मिंग हो रही है तो कोई गलत नहीं है।**

देश में रासायनिक उर्वरकों की मौसमवार खपत

तालिका–1

प्रतिशत में

वर्ष	खरीफ	रबी पोषक तत्वों का उपयोग हजार टन में	योग	खरीफ	रबी
1970–71	830	229	1059	78.38	21.62
1980–81	2,138	3,318	5,516	38.80	61.20
1990–91	5,141	6,805	12,546	45.80	54.20
2000–01	8,034	8,668	16,702	48.10	51.90
2001–02	8,035	9,275	17,360	46.60	53.40

वर्ष 1960–61 के दौरान कुल मात्र 292 हजार टन उर्वरक उपयोग हुआ था।

स्रोत : रसायन तथा उर्वरक मंत्रालय।

वर्ष 2001–2002 के दौरान राज्य/संघवार उर्वरकों की खपत (कि.ग्रा.)

तालिका–2

क्र. सं	राज्य/संघ राज्य	2001–2002
1.	पंजाब	173.38
2.	हरियाणा	155.69
3.	आंध्र प्रदेश	143.46
4.	तमिलनाडू	141.55
5.	उत्तरप्रदेश (उत्तरांचल सहित)	130.44
6.	पश्चिम बंगाल	126.82
7.	मणिपुर	104.94
8.	कर्नाटक	101.48
9.	बिहार	87.39
10.	गुजरात	85.92
11.	महाराष्ट्र	78.24
12.	जम्मू और कश्मीर	64.55
13.	केरल	60.72
14.	हिमाचल प्रदेश	41.40
15.	उड़ीसा	40.91
16.	मध्य प्रदेश	39.96
17.	राजस्थान	38.88
18.	असम	38.81
19.	त्रिपुरा	30.45
20.	मेघालय	17.16
21.	मिजोरम	13.72
22.	सिक्किम	9.72
23.	अरूणाचल प्रदेश	2.88
24.	नगालैंड	2.13

मृदा के तीन गुण हैं : भौतिक, रासायनिक और जैविक। आज जो उर्वरक मृदा में दिए जा रहे हैं, वह सिर्फ मृदा के रसायनिक गुणों को ही बढ़ाते हैं और शेष दो गुणों के अभाव के कारण खाद्यान्नों में विषाक्तता पैदा हो जाती है जिसका मनुष्य या अन्य किसी भी जीव द्वारा उपभोग किए जाने पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

बहरहाल, हरितक्रांति का असर जीव, जमीन, जल, जंगल पर चाहे जो रहा हो, इस हरितक्रांति ने भारतवासियों को सिर्फ दो जून की रोटी ही मुहैया नहीं कराई बल्कि आज देश के खाद्यान्न भंडारों को लबालब भर दिया है। आज देश इस मुकाम पर पहुंच गया है कि जब देश की जनसंख्या मात्र 35–36 करोड़ के लगभग थी, तब आबादी का एक बड़ा हिस्सा खाली पेट सोने को मजबूर था। वहीं पर आज देश की जनसंख्या लगभग 105 करोड़ से अधिक हो गई है और दिन–प्रतिदिन कृषि क्षेत्रफल कम हो रहा है। इसके बावजूद आज शायद ही कोई अन्न की कमी के कारण दम तोड़ता हो। यदि कही ऐसा नजर आता है तो सिर्फ असमान वितरण से गोदामों में ही अनाज नष्ट हो जाता है। सन् 1950–51 में देश का कुल खाद्यान्न 48 मिलियन टन के आसपास था जो आज 2000–2001 में बढ़कर 1996.13 मिलियन टन तक पहुंच गया है और सन् 1999–2000 में अच्छे मानसून के कारण कुल खाद्यान्न उत्पादन 208.87 मिलियन टन तक पहुंच गया था।

आज हमारा देश दुग्ध, दलहन, चाय, कपास, जूट आदि फसलों के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर एवं गेहूं, चावल, मूंगफली, सरसो, गन्ना, सब्जी आदि फसलों में द्वितीय तथा इसी प्रकार फलोत्पादन, अन्न, तंबाकू, भेड़पालन आदि में विश्व में तीसरा मुकाम हासिल कर चुका है। इसलिए आज हम बड़े गर्व के साथ कह सकते हैं कि हमारा देश अन्न–धन से पूरी तरह से आत्मनिर्भर हो चुका है। लेकिन अब भारतीय कृषि के सामने मजबूरी सिर्फ यही है कि सन् साठ के दशक में लोगों को भूख से मुक्ति दिलाने के लिए रासायनिक उर्वरकों और कृषि रसायनों के प्रयोग पर अधिक से अधिक बल दिया गया था, वहीं पर आज फिर देश के सामने कुछ उसी प्रकार की मजबूरी इन रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि रसायनों को छोड़ने के लिए खड़ी हो गई है। आज की खेती से टिकाऊ उत्पादन संभव नहीं है और आने वाली अगली पीढ़ी के लिए हितकर नहीं है। आज हमारी खेती को आधुनिकता के साथ–साथ पारंपरिक खेती के मिश्रण की आवश्यकता आ पड़ी है। आज भारतीय कृषि को 'ज्यादा उत्पादन के साथ टिकाऊ उत्पादन' का नारा देने की आवश्यकता आ पड़ी है जिससे हमारे जीवन का आधार प्राकृतिक संसाधन जल, जमीन, जंगल, वायु और वातावरण पुनः अपनी वास्तविक स्थिति में लौट सकें और मानव जीवन के साथ–साथ धरती के समस्त प्राणियों का कल्याण हो सके।

वैसे, कृषि में रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि रसायनों के प्रयोग से छुटकारा पाना कठिन जरूर लगता है, पर है बहुत आसान। **आज हमारे देश के कृषकों को फिर आवश्यकता है अपनी पारंपरिक और जैविक खाद के उपयोग की और उनका मूल्य समझने की। साथ ही आवश्यकता है इन जैविक खादों को वैज्ञानिक रूप से बनाने की, जिससे अधिक से अधिक पोषक तत्व खाद में आ सकें।** रासायनिक उर्वरकों के विकल्प के रूप में किसान वर्मीकंपोस्ट, नडेप कंपोस्ट, गोबर की खाद, हरी खाद, विष्टा की खाद, विभिन्न खलियों की खाद, मछली की खाद, हड्डी की खाद आदि को अपने फार्म प्रक्षेत्र में ही वैज्ञानिक विधि द्वारा तैयार कर इस्तेमाल कर सकते हैं।

कीटनाशक के रूप में देशी गाय के मूत्र को प्रयोग कर सकते हैं। **गाय के मूत्र की उपयोगिता को तो वैज्ञानिक भी सिद्ध कर चुके हैं। अब तो बड़ी–बड़ी कंपनियां भी नीम की नीमोली से अच्छी गुणवत्ता की कीटनाशक दवाएं बना रही हैं।** इस प्रकार से किसान जैविक खादों एवं कीटनाशकों को अपने फार्म प्रक्षेत्र में ही वैज्ञानिक विधि से बनाकर खेती में उपयोग कर सकते हैं और अच्छे कृषि उत्पादन के साथ–साथ खेती में आने वाली लागत को भी काफी कम कर सकते हैं और पीढ़ी–दर–पीढ़ी टिकाऊ उत्पादन ले सकते हैं। ❑

प्रसार शिक्षा विभाग,
कृषि विज्ञान संस्थान,
बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,
उत्तर प्रदेश।

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, लेवल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रैवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

आपका डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को **नई दिल्ली** में देय होना चाहिए।

कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से मंडराते खतरे

☞ आर.वी.एस. गर्ग

भारतीय कृषि में रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशकों के बेलगाम प्रयोग से जन्में खतरे अब तेजी से दिखाई ही नहीं दे रहे हैं, वे घातक भविष्य की चेतावनी भी दे रहे हैं। यदि समय रहते इनके प्रयोग पर अंकुश नहीं लगाया गया तो ये व्यापक रुप से स्वास्थ्य के खतरों के साथ-साथ जनहानि के लिए भी उत्तरदायी बन जाएंगे।

बीजारोपण से लेकर फल तैयार होने तक का सफर तय करने में कीटनाशकों की भूमिका अब खलने लगी है। हरितक्रांति के ये अग्रदूत – उर्वरक व कीटनाशक, अब धीरे-धीरे जनहानि का सबब बन रहे हैं और इसकी प्रमुख वजह है इनकी उन्मुक्त उपलब्धता। नकली शराब में यूरिया के प्रयोग के अनेक मामले प्रकाश में आए हैं, जिसमें प्रतिवर्ष भारी जनहानि होती है। अब कीटनाशक आत्महत्या के सुलभ साधन बनते जा रहे हैं। पंजाब, उत्तरप्रदेश व राजस्थान के कुछ क्षेत्रों से प्राप्त आंकड़े इसकी पुष्टि करते हैं। इन राज्यों में कीटनाशकों (एल्यूमीनियम फास्फाइड) के दुरुपयोग के कारण हजारों की संख्या में युवक-युवतियां प्रतिवर्ष जीवन का अंत कर रहे हैं क्योंकि इस कीटध्न (सल्फाज) की टिक्कियां बाजार में बिना रोकटोक मिल जाती हैं। अकेले राजस्थान में 1996 में 360 मौतें हुई थीं जो 2000 में बढ़कर 732 हो गईं। राज्य के सवाई मानसिंह अस्पताल के न्यायिक विभाग में हर हफ्ते कीटनाशकों के दुरुपयोग के 10 मामले आते हैं जिनमें 3/4 सल्फाज के होते हैं। उत्तरप्रदेश के बरेली व शाहजहांपुर जिलों में सल्फाज के दुरुपयोग से पैदा हुए आत्महत्या के अनेक मामले प्रकाश में आए हैं। पंजाब के अमृतसर जिले में सल्फाजजनित आत्महत्या के मामलों की जैसे बाढ़ आ गई हो। माना कि आत्महत्या एक सामाजिक समस्या है लेकिन इसमें घातक कीटध्न की 'सहज उपलब्धता' को एकदम नकारा नहीं जा सकता। सल्फाज की बिक्री 'इनसेक्टीसाइड एक्ट' द्वारा नियमित है जिसके अनुसार यह केवल सरकारी संगठन, उपक्रम व कीट पतंग नियंत्रण कर्मी द्वारा ही उपलब्ध कराया जा सकता है लेकिन गैरकानूनी तरीके से इसे हासिल करना कतई मुश्किल नहीं है।

भारतीय कृषि में रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशकों के बेलगाम प्रयोग से जन्में खतरे अब तेजी से दिखाई ही नहीं दे रहे हैं, वे घातक भविष्य की चेतावनी भी दे रहे हैं। यदि समय रहते इनके प्रयोग पर अंकुश नहीं लगाया गया तो ये व्यापक रुप से स्वास्थ्य के खतरों के साथ-साथ जनहानि के लिए भी उत्तरदायी बन जाएंगे। कुछ समय पहले आंध्रप्रदेश के वारंगल जिले में कपास की कृषि में प्रयोग होने वाले कीटनाशकों (मुख्यतः एंडोसल्फान) के कारण 500 कृषकों के मरने व 1000 से अधिक के गंभीर रुप से अस्वस्थ होने की घटना इसकी पुष्टि करती है। केरल राज्य कृषि को कीटपतंगों से बचाने के लिए एंडोसल्फान का वर्षों से प्रयोग कर रहा है। शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि जिन-जिन क्षेत्रों में एंडोसल्फान का हवाई छिड़काव किया गया है वहां के निवासियों में कैंसर, मिर्गी, मानसिक पिछड़ापन व स्नायुविक विकारों का सर्वाधिक अनुपात पाया गया। इस घातक रासायनिक घोल के हवाई छिड़काव से संबंधित सावधानियों को नजरंदाज करना ही इसके लिए उत्तरदायी बना।

ऐसा लगता है जैसे कीटनाशकों से बचाव संभव नहीं है। कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च के जर्नल *इंडियन फार्मिंग* के हाल के एक अंक में प्रकाशित एक सर्वेक्षण के अनुसार **हिमाचल प्रदेश में 1000 टन सेब पैदा करने के लिए लगभग एक टन कवकनाशी का प्रयोग किया जाता है। ये सेब सीधे बाजार में आते हैं, यद्यपि उन पर कीटनाशकों का प्रभाव बना रहता है। यह बात सामान्य रूप से प्रयोग की जाने वाली सब्जियों के बारे में भी उतनी ही सच है।** बंगलौर के पास के कुछ क्षेत्रों से बैंगन, मिर्च, गोभी, आलू, टमाटर, पत्तागोभी, खीरा व शिमला मिर्च के एकत्र किए नमूनों के परीक्षण से पता चला है कि उनमें 3/5 पर कीटनाशक अवशिष्ट थे, जिनमें से 1/5 पर अधिकतम अवशिष्ट पाए गए जो स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा पैदा करने के लिए काफी हैं। फलों- सब्जियों को मात्र धो लेने से कीटनाशकों का प्रभाव समाप्त नहीं होता क्योंकि ये अवशिष्ट उनके अंदर तक पहुंच गए होते हैं। फ्रैंच शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि कीटनाशकों के अंधाधुंध

प्रयोग से अन्य खतरों के अलावा मनुष्य की प्रजनन शक्ति प्रभावित हो सकती है।

पहले बंद बोतलों में बिकने वाला पानी और अब शीतलपेय कीटघ्न के शिकार हो रहे हैं। दिल्ली स्थित गैर सरकारी संगठन 'सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट' के एक अध्ययन से पता चला था कि अधिसंख्य बंद बोतलों में बिकने वाले पानी में कीटनाशक (आर्गनो क्लोराइंस व आर्गनो फास्फोरस) विद्यमान थे तथा जो शुद्ध पानी के वैश्विक मानदंडों से अधिक था। वास्तविकता यह है कि बंद बोतलों में बिकने वाले पानी के अधिकांश स्रोत (यथा, क्यूनिसयल आपूर्ति, स्थानीय नदियों से प्राप्त आदि) उतने विश्वसनीय नहीं रहे, जिसका प्रभाव अकेले भारत में ही नहीं अपितु पूरी दुनिया पर देखा जा सकता है। जल संबंधी बीमारियों के कारण दुनिया भर में हर वर्ष 34 लाख मौतें होती हैं। सेंटर फार साइंस एंड एनवायरमेंट के हाल के एक और अध्ययन से ठंडे पेयों पर भी प्रश्नचिन्ह लग गया है क्योंकि उनमें भी स्वीकृत मात्रा से अधिक कीटघ्न पाए गए हैं।

यह कहना कठिन है कि अनाज, सब्जियां, मांस, मछली, रक्त आदि कीटघ्न के प्रभाव से कितने मुक्त हैं। यहां तक कि मां के दूध में भी कीटघ्न के अवशिष्ट पाए गए हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग मानव स्वास्थ्य के लिए अनेक खतरे पैदा कर रहा है। बालकों में विकृति, यकृत विकार, हृदय रोग, स्नायुविक रोग, गुर्दा रोग से लेकर कैंसर व प्रजनन क्षमता का ह्रास हादि असाधारण किस्म की शारीरिक व मानसिक विकृतियां कीटनाशकों के बेलगाम प्रयोग से सामने आ रही हैं। जिन कारखानों में कीटनाशकों का निर्माण होता है, वहां के श्रमिक व उत्पादन से जुड़े अन्य लोगों के लिए भी गंभीर स्वास्थ्य संकट पैदा होने की संभावनाएं हैं, यदि इन खतरों से जूझने के लिए पर्याप्त बचाव की व्यवस्था न की गई हो। भोपाल कांड (यूनियन कार्बाइड) में तो कीटनाशकों की जहरीली गैस ने श्रमिकों से लेकर आसपास के अनेक क्षेत्रों के लोगों को न केवल मानसिक रूप से विकृत कर दिया था अपितु हजारों मौतों का कारण भी बना था।

रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकजनित हरितक्रांति ने भूमि, वायु व जल की अपार क्षति की है। उनके बेलगाम प्रयोग ने नदियों, झरनों व भूमिगत जल को प्रदूषित तो किया ही है, स्वयं भूमि की उत्पादकता का ह्रास भी कर दिया है। अब हम हरितक्रांति के अल्पकालीन लाभों पर निर्भर रहकर, बढ़ती हुई दीर्घकालीन सामाजिक लागत को नजरअंदाज नहीं कर सकते। अब समय आ गया है कि हम अविछिन्न कृषि प्रणाली को अपनाकर देश के दीर्घकालीन हितों को वरीयता दें। हमारी प्राचीन कृषि पद्धति जैविक कृषि पर आधारित थी जिसमें कीटघ्न या रासायनिक उर्वरकों का कोई स्थान नहीं था। विद्यमान परिस्थितियों में पूर्णतः प्राचीन कृषि पद्धति को अपनाना भले ही संभव न हो लेकिन इन घातक विषों के बढ़ते जा रहे प्रयोग पर अंकुश लगाना आवश्यक है। कुछ राज्यों में जैविक कृषि का सूत्रपात हो चुका है, जिनमें मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, हरियाणा व कर्नाटक प्रमुख हैं।

कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग मानव स्वास्थ्य के लिए अनेक खतरे पैदा कर रहा है। बालकों में विकृति, यकृत विकार, हृदय रोग, स्नायुविक रोग, गुर्दा रोग से लेकर कैंसर व प्रजनन क्षमता का ह्रास आदि असाधारण किस्म की शारीरिक व मानसिक विकृतियां कीटनाशकों के बेलगाम प्रयोग से सामने आ रही हैं।

मध्यप्रदेश में कुछ गैर– सरकारी संगठन व्यापक रूप से जैविक कृषि अपनाने पर बल दे रहे हैं और उन्हें सफलता भी मिली है। आरंभिक रूप से यहां के 10 गांवों में जैविक कृषि अपनाई गई और लगभग 1500 गांव इस ओर मुड़ रहे हैं। दिलचस्प बात यह है कि इन गांवों में कृषि उपज सुधरी है तथा कृषकों को अपनी फसल का अधिक मूल्य मिला है। इतना ही नहीं उर्वरकों और कीटनाशकों को खरीदने के लिए कर्जे की निर्भरता भी कम हुई है। एक अनुमान के अनुसार जैविक कृषि को अपनाकर एक गांव औसत रूप से लगभग 25 लाख रुपये प्रतिवर्ष बचा लेता है क्योंकि इससे न केवल आदान लागत में कमी आती है अपितु उपज का बढ़ा हुआ मूल्य मिलता है। जैविक उत्पादों की बेहतर स्वीकार्यता है। कृषि मंत्रालय ने जैव कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए पंचवर्षीय योजना में एक राष्ट्रीय परियोजना तैयार की है, जिसके क्रियान्वयन पर 100 करोड़ रुपये व्यय किये जाएंगे। जैव कृषि की दिशा में की जा रही सरकारी पहल शुभ संकेत माना जाना चाहिए।

जब तक जैविक कृषि पूर्णतः पुनर्स्थापित नहीं हो जाती, कीटनाशकों के दुरुपयोग पर प्रभावी अंकुश लगाया जाए ताकि ये स्वास्थ्य क्षय व जनहानि के उत्तरदायी न बनें। उदाहरण के लिए सल्फाज की पैकिंग को सुरक्षित बनाया जा सकता है ताकि इसका दुरुपयोग न हो। इसकी बिक्री पर प्रतिबंध भी लगाया जा सकता है। दूसरे, इनके सीमित प्रयोग के लिए अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार का सहारा लिया जा सकता है। ये रसायन हमारी जीवी के लिए घातक शस्त्र न बन पाएं, इसके लिए प्रभावी उपचार की आवश्यकता है।

संयुक्त राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट में बताया गया है कि पानी की गुणवत्ता की दृष्टि से भारत का स्थान 120वां है। इस दस्तावेज में पानी की गुणवत्ता का पैमाना बनाते हुए कुल 122 देशों को शामिल किया गया तथा भारत को 10 में से 1.35 अंक मिले। दूसरे देशों में, पूरी दुनिया में मोरक्को और बेल्जियम ही ऐसे देश हैं जो पानी की गुणवत्ता की दृष्टि से भारत से बदतर हैं। यह स्थिति बदली जा सकती है यदि राजनीतिक इच्छाशक्ति प्रबल हो। अकेला पानी ही क्यों – समूचा घातक रासायनिक परिदृश्य, जो हमारे मन व जीवी को नष्ट–भ्रष्ट कर रहा है, को बदला जा सकता है। ❑

14 फ्रैंड्स एन्कलेव,
(पुराना रोडवेज डिपो)
सर्किट हाउस के सामने,
भरतपुर।

भारत में व्यापारिक फसलें एक सिंहावलोकन

☞ डा. अनिल कुमार सिन्हा

स्वाधीनता के पश्चात लगभग तीन दशकों तक खाद्य सुरक्षा की प्रमुख चुनौती अनाज उत्पादन बढ़ाना था। हरित क्रांति की सफलता से यह चुनौती कुछ कम हो गई, लेकिन आज समस्या लोगों की आर्थिक शक्ति बढ़ाने की है और इसका उपाय है व्यापारिक अथवा नकदी फसलों के क्षेत्र एवं उत्पादन में वृद्धि करना। अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के साथ कृषि क्षेत्र में समग्र आर्थिक विकास, रोजगार सृजन, गरीबी निवारण जैसी समस्याओं पर विजय पाने की भी व्यापक संभावनाएं हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ब्रिटिशकाल के पूर्व भारत में कृषि का उत्पादन छोटे–छोटे गांवों में रहने वाले किसानों द्वारा अपनी जीविका के लिए किया जाता था। उस समय गांव बहुत कुछ आत्मनिर्भर आर्थिक इकाइयों के रूप में थे और बाहरी दुनिया के साथ उनके संबंध यहीं तक सीमित थे कि वे भू–राजस्व का भुगतान कर दें, जो आमतौर से वस्तुओं के रूप में होता था, और गांव के मेलों – कस्बों से अपनी जरूरत की कुछ चीजें जैसे नमक और लोहा इत्यादि खरीद लें। किसान आमतौर पर वही फसलें उगाते थे जिनकी उन्हें अपने उपभोग के लिए जरूरत होती थी। ईस्ट इंडिया कंपनी के माध्यम से भारत पर अंग्रेजों की विजय से यहां की काया ही पलट गई। यहां के जीवन में बड़े–बड़े परिवर्तन हो गए। उन परिवर्तनों में सबसे बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि गांव के रहन–सहन का पुराना ढांचा बदल गया और हमारी कृषि अर्थव्यवस्था की शुरुआत हुई। सामान्यतः इसके दो प्रमुख कारण माने जाते हैं। प्रथम, अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्धकाल से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यकाल के बीच अंग्रेजों द्वारा नई–नई भू–प्रणालियों की शुरुआत तथा द्वितीय, परिवहन के द्रुतगामी साधनों एवं सिंचाई सुविधाओं के विस्तार से व्यापारिक कृषि की शुरूआत। इसी बीच अमरीका में गृह युद्ध के प्रारंभ होने से इंग्लैंड में कपास की आपूर्ति अपर्याप्त होने लगी, फलस्वरूप भारतीय कपास की मांग में एकाएक वृद्धि हो गई, और यहीं से भारतीय कृषि के व्यापारीकरण की प्रक्रिया का आरंभ माना जाता है। भारतीय कृषि उत्पादों की बढ़ती हुई मांग के कारण इनकी कीमतों में वृद्धि होने के साथ–साथ आंतरिक व्यापार भी बढ़ता गया। इस समय, अनाज, तिलहन, जूट, चाय के व्यापार के साथ–साथ अफीम, नील इत्यादि फसलों की भी विदेशी मांग होने लगी। इस प्रवृत्ति का भारतीय कृषि पर व्यापक प्रभाव पड़ा। प्रथम, कृषि क्षेत्र में वृद्धि होने लगी; द्वितीय, घटिया किस्म के अनाजों के स्थान पर अच्छे किस्म के अनाजों का उत्पादन होने लगा। तृतीय, फसलों का स्थानीकरण होने लगा अर्थात किसी विशेष क्षेत्र में वहां की मिट्टी, वातावरण के अनुरूप फसलों का उत्पादन किया जाने लगा तथा चतुर्थ, खाद्य फसलों की अपेक्षा व्यापारिक फसलों का उत्पादन बढ़ने लगा। इस बदलाव का यह परिणाम हुआ कि देश में खाद्य उपलब्धता की स्थिति भरपूर हो गई।

स्वतंत्रता के पूर्व भारत के बीस वर्षों के आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अनाजों के अंतर्गत की भूमि कम होने की प्रवृत्ति दिखाई देती है जबकि तिलहन, जूट एवं चाय के अंतर्गत की फसली भूमि में वृद्धि हो रही है। भूमि उपयोग संबंधी इन आंकड़ों से देश में कृषि के व्यापारीकरण के प्रारंभिक संकेत मिलते हैं।

स्वाधीनता के बाद की प्रगति

ब्रिटिशकाल में भारत में सामंतवादी अर्थव्यवस्था होने के कारण अधिकांश भूमि जागीरदारों, जमीनदारों, सेठ, साहूकारों के अधीन थी जिनका भूमि पर स्वामित्व तो था लेकिन भूमि पर उन्नत कृषि करने, सिंचाई के साधन विकसित करने, उत्पादकता बढ़ाने में उनकी रुचि नहीं के बराबर थी। अतः सदियों तक देश की कृषि भूमि का उपयोग अनाज उत्पादन तक ही सीमित रहा। फलतः व्यापारिक फसलों का उत्पादन सीमित मात्रा में होता रहा।

स्वतंत्रता के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं तथा एकवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कृषि सुधार करने का प्रयास किया गया। हरित–क्रांति ने अनाज उत्पादन में देश को आत्मनिर्भर बनाने में सक्षम भूमिका अदा की।

प्रमुख व्यापारिक फसलें

मूंगफली

भारत में उपोष्ण कटिबंधीय दशाओं के कारण मूंगफली के पौधे को अधिक अनुकूलता का परिवेश प्राप्त है। मूंगफली के उत्पादन में आज से लगभग डेढ़ दशक पूर्व देश का गुजरात राज्य प्रथम स्थान पर रहता था किंतु विगत कुछ वर्षों से तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश एवं कर्नाटक राज्य उत्पादन मात्रा में क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर हैं। तमिलनाडु राज्य के कोरोमंडल तट, सलेम, तिरुचिरापल्ली, उत्तरी एवं दक्षिणी अर्काट तथा

सारणी–1

ब्रिटिश भारत में व्यापारिक फसलों के अंतर्गत भूमि उपयोग

(आंकड़े हजार एकड़ में)

विवरण	वर्ष		
	1918–19	1924–25	1939–40
1. कुल बोया गया क्षेत्रफल	201384	226980	209960
2. कुल अनाजों के अंतर्गत भूमि	177844	200328	187050
3. विभिन्न व्यापारिक फसलों के अंतर्गत भूमि			
अ. तिलहन	10473	15014	16294
ब. कपास	14401	17414	13344
स. जूट	2473	2738	3119
द. चाय	688	716	738

स्रोत : डी.आर. गाडगिल – इंडस्ट्रियल इवोल्यूशन इन इंडिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1938

कोयंबटूर क्षेत्र में मूंगफली अधिकता में उत्पादित की जाती है। 1988–89 में जहां इस राज्य में 1.16 मिलियन टन मूंगफली का उत्पादन हुआ, 1999–2000 में यह बढ़कर 1.38 मिलियन टन हो गया जो देश के कुल उत्पादन का 25.99 प्रतिशत है। इसी तरह आंध्र प्रदेश राज्य में मूंगफली का कुल उत्पादन 1.12 मिलियन टन है, जो देश के कुल उत्पादन का 21.09 प्रतिशत है। तृतीय स्थान पर रहने वाले राज्य कर्नाटक में (1999–2000) मूंगफली का कुल उत्पादन 0.79 मिलियन टन है जो देश के कुल उत्पादन का 14.88 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त देश में गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश राज्यों में मूंगफली का उत्पादन किया जाता है। सारणी–2 एवं 3 से स्पष्ट है कि 1950–51 में मूंगफली के अंतर्गत 4.49 मिलियन हेक्टेयर भूमि में 3.48 मिलियन टन का उत्पादन हुआ। इसमें क्रमशः वृद्धि होकर 2000–01 में 6.70 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर मूंगफली की कृषि की गई, जिसमें 6.20 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त हुआ।

रेपसीड/सरसो

देश के महत्वपूर्ण तिलहन उत्पादनों में राई (लाही) एवं सरसो का प्रमुख स्थान है। ये मुख्यतः रबी की फसलें हैं जिनका सर्वाधिक उत्पादन उत्तर भारत में किया जाता है। वर्ष 1950–51 में इन दोनों तिलहनों के अंतर्गत 2.07 मिलियन हेक्टेयर भूमि थी जिस पर 0.76 मिलियन टन का उत्पादन हुआ। सन् 2000–01 में क्रमशः बढ़ते हुए 4.50 मिलियन हेक्टेयर में 4.20 टन का उत्पादन हुआ। देश के रेपसीड एवं सरसों उत्पादक राज्यों में प्रथम स्थान पर राजस्थान है जहां 2.65 मिलियन टन का उत्पादन होता है जो कुल उत्पादन का 44.46 प्रतिशत है। रेपसीड और सरसो का दूसरा बड़ा उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश है जहां देश का 18.29 प्रतिशत रेपसीड और सरसो उत्पादित किए जाते हैं। रेपसीड/सरसो के उत्पादन में तीसरा स्थान मध्य प्रदेश का है जहां देश के 11.24 प्रतिशत रेपसीड/सरसो की उत्पादकता दर प्रति हेक्टेयर 941 कि.ग्रा. है।

अन्य तिलहन

व्यापारिक फसलों के वर्ग में अन्य तिलहनों के अंतर्गत तिल, रामतिल, सोयाबीन, एरंड, सूरजबीन, अलसी और कुसुम को सम्मिलित किया जाता है। अखिल भारतीय उत्पादन क्षेत्र वर्ष 1950–51 में 4.16 मिलियन हेक्टेयर था जिसमें 0.91 मिलियन टन उत्पादन हुआ। अन्य तिलहनों के उत्पादन क्षेत्र एवं उत्पादन मात्रा में पर्याप्त प्रगति हुई है इसका प्रमाण यह है कि वर्ष 2000–01 में इनके अंतर्गत 11.10 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर 8.0 मिलियन टन तिलहनों का उत्पादन किया गया। तिल उत्पादक राज्यों में उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और बिहार राज्य अग्रणी हैं। सोयाबीन उत्पादन में अकेले मध्य प्रदेश देश के कुल उत्पादन का 65.54 प्रतिशत उत्पादित करता है जबकि महाराष्ट्र (23.86 प्रतिशत) एवं राजस्थान (8.84 प्रतिशत) उत्पादन मामले में क्रमशः द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर हैं। सूरजमुखी के उत्पादन में आंध्र प्रदेश 0.23 मिलियन टन उत्पादन कर (देश के कुल उत्पादन का 28.75 प्रतिशत) देश में प्रथम स्थान पर है जबकि कर्नाटक (26.25 प्रतिशत) एवं महाराष्ट्र (26.24 प्रतिशत) क्रमशः द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर हैं।

कपास

भारत में अनुकूल जलवायु एवं प्राचीनकाल से वस्त्र के लिए इसके उपयोग के फलस्वरूप कपास की कृषि यहां प्राचीनकाल से ही होती आ रही है। कपास के उत्पादन की दृष्टि से दक्षिण का काली मिट्टी का प्रदेश बड़ा महत्वपूर्ण है। महाराष्ट्र, गुजरात एवं आंध्र प्रदेश देश के कुल कपास उत्पादन का 58.34 प्रतिशत (1999–2000) उत्पन्न करते हैं। देश में कपास का रिकार्ड उत्पादन 1990–91 में 9.84 मिलियन गांठों का हुआ। 2000–01 में कुछ घटकर 9.70 मिलियन गांठें रह गया।

महाराष्ट्र भारत का अग्रणी कपास उत्पादक राज्य है। वर्ष 1999–2000 के आंकड़ों के अनुसार महाराष्ट्र में 3.10 मिलियन गांठें कपास का उत्पादन हुआ जो देश के कुल उत्पादन का 26.63 प्रतिशत है। इसी तरह 2.09 मिलियन गांठें कपास का उत्पादन कर गुजरात (17.96

सारणी–2

भारत में व्यापारिक फसलों के उत्पादन क्षेत्र में प्रगति

(मिलियन हेक्टेयर में)

क्र.	फसल का नाम	1950–51	1960–61	1970–71	1980–81	1990–91	2000–01
1.	मूंगफली	4.49	6.46	7.33	6.80	8.30	6.70
2.	रेपसीड/सरसो	2.07	2.88	3.32	4.11	5.78	4.50
3.	अन्य तिलहन (अन्य 7 तिलहन)	4.16	4.43	5.99	6.69	10.06	11.10
4.	कपास	5.88	7.61	7.33	7.82	7.44	8.60
5.	जूट/मेस्टा	0.57	0.90	1.1	1.3	1.0	1.0
6.	गन्ना	1.71	2.42	2.62	2.67	3.7	4.3

सारणी–3

भारत में व्यापारिक फसलों के उत्पादन की प्रगति

क्र.	फसलों का नाम	1950–51	1960–61	1970–71	1980–81	1990–91	2000–01
1.	मूंगफली	3.48	4.81	6.11	5.01	7.5	6.20
2.	रेपसीड/सरसो	0.76	1.34	1.97	2.30	5.2	4.20
3.	अन्य तिलहन (अन्य 7 तिलहन)	0.91	0.83	1.55	2.06	5.90	8.0
4.	कपास*	3.04	5.60	4.76	7.01	9.84	9.70
5.	जूट/मेस्टा	4.43	5.38	6.59	8.09	9.26	10.50
6.	गन्ना**	57.05	110.00	126.36	154.25	241.04	299.20

• *अन्य सात तिलहनों में तिल, रामतिल, सोयाबीन, एरंड, सूरजबीन, अलसी और कुसुम सम्मिलित हैं।*

* *170 कि.ग्रा. की मिलियन गांठें*

** *गन्ना उत्पादन प्रति टन हेक्टेयर*

स्रोत : 1 द इकोनामिक–स्टेटिस्टिकल सर्वे ऑफ द इंडियन इकोनामी (1984) पृष्ठ सं. 29–62

2. वार्षिक संदर्भ ग्रंथ भारत 1999, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार पृष्ठ 397–399

3. भारतीय आर्थिक समीक्षा 2001–02

प्रतिशत) द्वितीय स्थान एवं एक मिलियन गांठें कपास उत्पादित कर आंध्र प्रदेश (13.75 प्रतिशत) तृतीय स्थान पर है। इसके अलावा पंजाब, कर्नाटक, हरियाणा, राजस्थान, तमिलनाडु एवं मध्य प्रदेश में भी कपास प्रमुखता से उत्पादित की जाती है।

सारणी–2 एवं 3 से स्पष्ट है कि कपास के कृषिगत क्षेत्रफल में तथा उत्पादन में क्रमशः वृद्धि हुई है। सन् 1950–51 में 5.88 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में कपास की कृषि की गई जिससे 3.04 मिलियन गांठें प्राप्त हुईं। 2000–01 के आंकड़ों के अनुसार 8.60 मिलियन हेक्टेयर में 9.70 मिलियन गांठें कपास उत्पादित की गईं। देश में कपास की उत्पादकता में भी प्रगति दिखाई देती है। सन् 1950–51 में जहां 88 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त हुई वहीं 1990–91 में थोड़ा नीचे गिरकर कपास की उत्पादकता 191 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर रह गई।

देश में लंबे रेशे की कपास का उत्पादन कम होता है अतः इसके क्षेत्र में विस्तार किए जाने की जरूरत है। इसके बावजूद भारत कपास का विदेशों को निर्यात भी करता है। वर्ष 2000–01 में 224 करोड़ रुपये की कपास का निर्यात किया गया।

जूट/मेस्टा

जूट एवं मेस्टा रेशेदार फसलें हैं जिनके छिलके विविध औद्योगिक कार्यों में प्रयुक्त होते हैं। इसका सबसे अधिक उपयोग विभिन्न वस्तुओं को रखने के लिए बोरियां बनाने में होता है। इसके अतिरिक्त कालीन, दरी, रस्सी, सजावट का सामान इत्यादि निर्माण में भी उपयोग किया जाता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा जूट उत्पादक देश है। अकेले यह विश्व का तीन चौथाई जूट उत्पादित करता है। ब्रिटिश काल से ही जूट की व्यावसायिक कृषि को बंगाल में प्रोत्साहित किया गया और यही कारण है कि भारत का सबसे अधिक जूट उत्पादन पश्चिम बंगाल में किया जाता है। सन् 1999–2000 के आंकड़ों के अनुसार पश्चिम बंगाल में 7.68 मिलियन गांठें जूट का उत्पादन हुआ जोकि देश के कुल उत्पादन

सारणी–4

भारत में व्यापारिक फसलों की उत्पादकता प्रगति

(उत्पादन प्रति हेक्टेयर कि.ग्रा.)

क्र.	फसल का नाम	1950–51	1960–61	1970–71	1980–81	1990–91	2000–01
1.	मूंगफली	775	745	834	736	904	924
2.	रेपसीड/सरसो	368	476	594	560	904	941
3.	अन्य तिलहन	481	507	579	532	771	826
4.	कपास	88	125	106	152	225	191
5.	जूट	1043	1183	1186	1245	1833	2014
6.	मेस्टा	742	684	828	880	1019	1154
7.	गन्ना*	33.4	45.5	48.3	57.8	65.3	69.0

* *(गन्ना उत्पादन/टन हेक्टेयर)*

स्रोत : 1. वार्षिक संदर्भ ग्रंथ –भारत 1999, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ 397–399
2. भारतीय आर्थिक समीक्षा 2001–02 पृष्ठ एस – 18

का 72.93 प्रतिशत है। इसी तरह 1.28 मिलियन गांठें जूट उत्पादित कर बिहार दूसरे स्थान पर तथा 0.68 मिलियन गांठें जूट उत्पादन कर असम तीसरे स्थान पर है। देश के अन्य उत्पादक राज्यों में उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, त्रिपुरा, मेघालय तथा उत्तर प्रदेश का स्थान महत्वपूर्ण है। जूट और उससे निर्मित सामग्री के निर्यात में भी भारत की स्थिति अच्छी है। सन् 1960–61 में जहां देश से 135 करोड़ रुपये के मूल्य की जूट वस्तुओं का निर्यात किया गया वहीं 2001–02 में यह बढ़कर 933 करोड़ रुपये हो गया।

गन्ना

मुद्रादायिनी फसलों में गन्ना एक प्रमुख फसल है जिससे शक्कर के अतिरिक्त अल्कोहल, शीरा एवं चारे की प्राप्ति होती है। भारत में जबसे शक्कर की मिलें लगाई गईं तबसे इसके उत्पादन एवं उत्पादन क्षेत्र में उत्तरोत्तर वृद्धि होती चली गई है। सन् 1950–51 में जहां 1.71 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर गन्ना बोया गया और इसमें 57.05 मिलियन टन गन्ने का उत्पादन हुआ, 2000–01 में यह बढ़कर 4.3 मिलियन हेक्टेयर में 299. 2 मिलियन टन हो गया जबकि देश में गन्ने की कृषि के लिए व्यापक क्षेत्र में भौगोलिक दशाएं मौजूद हैं किंतु गन्ने पर आधारित उद्योगों की ओर सरकार का समुचित ध्यान न होने के कारण गन्ने की कृषि पर कुप्रभाव पड़ा है। गन्ना उत्पादन की दृष्टि से भारत में उत्तर प्रदेश का स्थान सबसे ऊंचा है। सन् 1999–2000 के आंकड़ों के अनुसार उत्तर प्रदेश में 115.42 मिलियन टन गन्ने का उत्पादन किया गया जो देश के कुल उत्पादन का 38.57 प्रतिशत है। इसी तरह 53.14 मिलियन टन उत्पादन के साथ महाराष्ट्र (17.76 प्रतिशत) द्वितीय स्थान एवं 36.51 मिलियन टन उत्पादन के साथ कर्नाटक (12.20 प्रतिशत) तृतीय स्थान पर है। अन्य उत्पादक राज्यों में तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, पंजाब, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, असम, पश्चिम बंगाल एवं राजस्थान का महत्वपूर्ण स्थान है।

देश को मुद्रादायिनी फसलों के बेहतर उत्पादन में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है अतः इसके विकास तथा कृषि के व्यापारीकरण हेतु कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं:–

- किसान और उद्योगों के बीच सहयोगात्मक रुख होना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों को भी समुचित रूप से जोड़ने के लिए परिवहन संबंधी आधारभूत ढांचे की आवश्यकता है। इस हेतु वर्तमान में प्रारंभ की गई प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का नियोजित क्रियान्वयन काफी कारगर साबित होगा।
- टेक्नोलॉजी खर्चीली नहीं होनी चाहिए तथा लागत में भी कमी होनी चाहिए। प्रायः यह देखा गया है कि यूरोप और इजराइल से जो टेक्नोलॉजी भारी कीमत देकर हासिल की जाती है, उसमें हमारी जलवायु और परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन करने पड़ते हैं।
- बेहतर किस्म और अधिक उत्पादन के लिए बीज और पौधे के चयन से लेकर फसल कटाई तक वैज्ञानिक तकनीक को अपनाया जाना चाहिए तभी अंतर्राष्ट्रीय बाजार प्रतिस्पर्धा में भारतीय किसान टिका रह पाएगा।
- देश के सभी बड़े, मध्यम एवं छोटे शहरों के पास कृषि उद्योग परिसर, कृषि व्यवसाय केंद्र तथा कृषि क्लीनिकों की स्थापना की जानी चाहिए।
- देश में कृषि अनुसंधान विकास और प्रबंधन के बीच बेहतर तालमेल बनाया जाना अत्यंत आवश्यक है तभी हम भारतीय कृषि को उद्योग का दर्जा दे पाने में सक्षम होंगे।❑

भूगोल विभाग,
स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध केंद्र,
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अंबिकापुर (छत्तीसगढ़)

पंचायत महायज्ञ में व्यवधान नया संशोधन क्या कर पाएगा समाधान

☞ वेद प्रकाश अरोड़ा

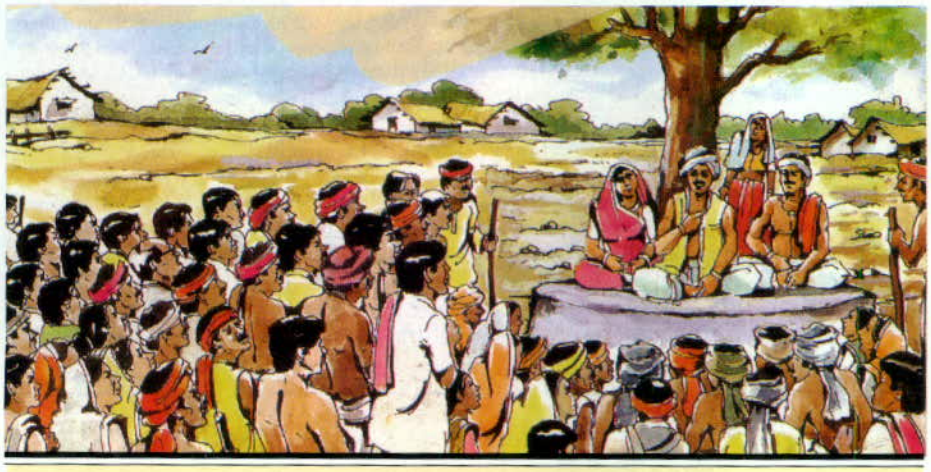

ढाई लाख पंचायत संस्थाओं की सात सौ करोड़ रुपये की आय गांवों की बढ़ती समस्याओं के समाधान के लिए ऊंट के मुंह में जीरे के बराबर है। इस राशि और भारत की 70 करोड़ से अधिक ग्रामीण जनता के अनुपात में एक और दस का अंतर है यानी एक व्यक्ति के हिस्से मुश्किल से दस रुपये आते हैं।

पंचायती राज प्रणाली को संबल प्रदान करने की दिशा में सन् 2003 के जुलाई माह ने अमिट छाप छोड़ी है। 25 जुलाई को लोकसभा में घोषणा की गई कि पंचायती राज को सुदृढ़ बनाने के लिए सरकार जल्द नया संविधान संशोधन विधेयक लाकर पंचायतों को वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार प्रदान करेगी।

इस समय पंचायतों की वित्तीय स्थिति काफी शोचनीय और दयनीय है। उनके प्रशासनिक अधिकार भी ऊंट के मुंह में जीरे की तरह हैं, हालांकि पंचायती राज संस्थाओं की महत्ता स्वीकार करते हुए 1992 में उन्हें वैधानिक मान्यता देकर सशक्त बनाने का प्रयास किया गया था। इसके लिए संविधान के 73वें और 74वें संशोधन द्वारा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का ऐतिहासिक कदम उठाया गया और पंचायतीराज प्रणाली 24 अप्रैल, 1993 को लागू कर दी गई। लेकिन देखा गया है कि इस युगांतकारी निर्णय के बाद एक दशक बीत जाने पर भी पंचायतें दमदार नहीं बन पाई हैं और उनके क्रियाकलापों में अपेक्षित उत्साह की कमी देखी जा रही है। इसीलिए इन संस्थाओं के अब तक के कामकाज का लेखा–जोखा करने, कमियों–कमजोरियों और कठिनाइयों को उजागर करने, उन्हें सशक्त बनाने और आगे की रणनीति पर विचार करने के लिए पांच–छह अप्रैल, 2003 को नई दिल्ली के तालकटोरा स्टेडियम में आयोजित अखिल भारतीय पंचायत अध्यक्ष सम्मेलन में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, तत्कालीन ग्रामीण विकास मंत्री वैंकया नायडू और अनेक प्रतिनिधियों ने संविधान में दूसरे संशोधन की आवश्यकता पर बार–बार जोर दिया था। प्रधानमंत्री को अपने उद्घाटन भाषण में यह कहना पड़ा कि मात्र तीस हजार रुपये वार्षिक आय से कोई पंचायत देश में क्रांति कैसे ला पाएगी? खंड स्तर पर 60 हजार और जिला स्तर पर 12 लाख रुपये से ग्रामीण भारत की दशा में आमूल सुधार लाने की बात तो सोची भी नहीं जा सकती। ढाई लाख पंचायत संस्थाओं की सात सौ करोड़ रुपये की आय गांवों की महाकार लेती समस्याओं के समाधान के लिए ऊंट के मुंह में जीरे के बराबर है। इस राशि और भारत की 70 करोड़ से अधिक ग्रामीण जनता के अनुपात में एक और दस का अंतर है यानी एक व्यक्ति के हिस्से मुश्किल से दस रुपये आते हैं।

पंचायतों की जिम्मेदारियां बहुत अधिक हैं पर जेब खाली है। सच तो यह है कि भूखे भजन न होई गोपाला...। पंचायत सदस्यों

और संसद सदस्यों के बीच भारी अंतर बहुत कचोटने वाला है। एक सांसद को अपने संसदीय क्षेत्र के विकास के लिए दो करोड़ रुपये प्रति वर्ष मिलते है लेकिन पंचों को शायद ही कोई पैसा मिलता है। इसी तरह राज्यों के स्वायत्तता के प्रश्न पर तो विधानसभाओं और संसद में घमासान चलता रहता है लेकिन नींव की इन इकाइयों को स्वायत्तता देने पर चुप्पी साध ली जाती है। राज्यों को वित्त आयोग बनाने थे, लेकिन इसकी उपेक्षा कर दी गई। जब तक जड़ों को निरंतर पानी और आक्सीजन नहीं मिलेगी, बाग में फूलों की बहार नहीं आएगी।

ग्रामीण विकास मंत्रालय बजट आवंटन की दृष्टि से सबसे बड़े मंत्रालयों में गिना जाता है। दसवीं योजना में नौवीं योजना की तुलना में उसकी व्ययराशि 72,874 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 76,774 करोड़ रुपये कर दी गई है। फिर भी पंचायतें धन के लिए मोहताज बनी रहीं। क्यों? यह संशोधन इसलिए भी आवश्यक हो गया है कि पंचायती राज संस्थाओं और राज्य सरकारों के बीच अधिकारों की सीमा मटमैली बनी हुई है, जिसका पूरा लाभ राज्य सरकारें उठाती हैं। अन्य बहुत–सी खामियां और कमियां भी पंचायती राज संस्थाओं के हाथ–पांव बांधे रखती हैं। ये सलाहकार संस्थाओं से अधिक अहमियत नहीं रखतीं और समानांतर संस्थाओं की कुकरमुत्तों की तरह बढ़ती संख्या भी आयोजना और क्रियान्वयन में रुकावट बनकर पंचायत प्रणाली को डंक मारती रहती है। संविधान में यह संशोधन करना इसलिए भी आवश्यक हो गया है कि आयोजना और क्रियान्वयन की सीधी जिम्मेदारी पंचायती राज संस्थाओं को सौंप दी जाए और अन्य संस्थाओं को हटा दिया जाए या फिर पंचायतों के अधीन कर दिया जाए। **243वें अनुच्छेद के अंतर्गत पंचायतों को धन निकालने और जमा कराने का अधिकार मिलने तथा पंचायत कोष का गठन अनिवार्य कर दिए जाने के बाद जिला ग्रामीण प्राधिकरणों के बने रहने की भी कोई तुक नहीं, क्योंकि इन प्राधिकरणों का गठन मुख्य रूप से धन लेने और बांटने के लिए किया गया था।** जिला–स्तर पर आयोजना समितियों के सुचारू संचालन के कायदे–कानून बनाना जरूरी हो गया है। सभी विधानसभाओं के कामकाज के लिए देशभर में समान नियम–उपनियम हैं, लेकिन पंचायती राज संस्थाओं के सभी राज्यों में समान कायदे–कानून नहीं हैं। दस वर्ष बीत जाने पर भी जिला योजना समितियां नहीं बनाई गई हैं। इसी तरह कुछ राज्यों ने राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशों को लागू करने की बात तो दूर, उन्हें बनाया तक नहीं।

पंचायती राज संस्थाओं का संघीय ढांचा तो बन गया है और देखने–सुनने में प्रभावकारी भी लगता है लेकिन सच्चाई यह है कि विकेंद्रीकरण और सीढ़ी–दर–सीढ़ी हस्तांतरण का यह परीक्षण राज्यों की सीमाओं पर पहुंच कर ठिठक–सा जाता है। राज्य अपने अधिकारों का दायरा बढ़ाने पर तो केंद्र से अक्सर उलझ जाते हैं और इस मामले को संसद तथा राज्य विधानमंडलों में उठाते रहते हैं, लेकिन वे लोकतंत्र की सबसे नीचे की इकाइयों को अधिकार देने पर मौन साध लेते हैं। उनका यह मौन ग्राम स्वराज को ग्राम सुराज में बदलने में बड़ी बाधा बन जाता है। 73वें संविधान संशोधन के तहत कृषि, कृषि विस्तार, भूमि सुधार, सिंचाई, पशुपालन, मत्स्य पालन, लघु उद्योग, कुटीर उद्योग, आवास, सड़कें, बिजली, गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत, गरीबी निवारण, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण और सार्वजनिक वितरण प्रणाली जैसे 29 विषय पंचायती राज संस्थाओं को सौंप तो दिए गए लेकिन यह कागजी कार्रवाई कब वास्तविकता बनेगी, इसके लिए अभी बहुत सफर तय करना होगा और बहुत कसरत करनी पड़ेगी। प्राथमिक स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा और पेयजल की व्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम पर्याप्त धन के अभाव में धरे रह जाने का अंदेशा है।

सम्मेलन की कार्रवाई पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक नज़र डालने से यह तथ्य साफ उभरकर सामने आया कि पंचायतों को प्रशासनिक, वित्तीय और सामाजिक क्षेत्रों में वह स्थान, रुतबा और अधिकार प्राप्त नहीं हो पाए हैं जो उन्हें कानून और संविधान के अंतर्गत प्राप्त होने चाहिए थे। पंचायतों के प्राचीनकाल से चले आ रहे महत्व का ढोल तो बहुत पीटा गया और पंचों को परमेश्वर तक बना दिया गया, लेकिन वे आज भी उपेक्षा और उदासीनता के शिकार हैं। लेकिन इस सब के लिए सारा दोष राज्य सरकारों या केंद्र पर मढ़ देने से पंचायतें और पंच अपनी कारगुजारियों से दूसरों की आंखों में हमेशा धूल नहीं झोंक सकते। केंद्र, राज्य सरकारों और अधिकारियों के आत्मविश्लेषण के साथ–साथ ग्रामसभाओं को भी अपने गिरेबान में झांकना और अपनी कमजोरियों पर ध्यान देना होगा। कई पंचायतों की वर्तमान दुर्दशा के लिए वे स्वयं जिम्मेदार हैं। उनके आपसी झगड़े, पुरानी रंजिशें और मन की गांठें अक्सर कोई ठोस निर्णय लेने में रुकावट बन जाती हैं। कई प्रधानों की अशिक्षा उनके लिए अभिशाप बन जाती है। कहीं महिलाओं की अनुपस्थिति में उनके पति स्थानापन्न के रूप में काम करते हैं।

पंचायत के गठन के लिए न्यूनतम जनसंख्या एक हजार निर्धारित करने से कई क्षेत्रों में गांव गौण हो गए हैं। कुछ लोग बैठक के लिए एक गांव से दूसरे गांव जाना पसंद नहीं करते। कहीं–कहीं तो पंचायतें वनमैन शो बनकर रह गई हैं। जहां कुछ सत्ता विकेंद्रित हुई है, वहां वह ग्राम प्रधानों तथा जिला प्रधानों तक सिमटकर रह गई है। यहां इस तथ्य की भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि ग्राम पंचायतों और जिला परिषदों के कार्यों की रूपरेखा तो कुछ स्पष्ट की जा चुकी है लेकिन मध्यवर्ती तालुक या खंड–स्तरीय पंचायत संस्थाओं की भूमिका धूमिल बनी हुई है। पंचायती राज में तीनों स्तरों की पंचायतों में किसको कितनी स्वायत्तता मिलेगी और किसको क्या विकेंद्रित अधिकार मिलेंगे–इनकी सीमारेखा अभी तक निर्धारित नहीं की गई है या स्पष्ट नहीं हुई है। इन संस्थाओं और पदाधिकारियों के बीच मतभेदों के निपटारे के लिए कोई कारगर तंत्र भी स्थापित नहीं किया गया है। अगर कहीं ग्रामसभाओं का आपस में लड़ना–झगड़ना उनके लिए लानत बन जाता है तो कहीं जिला अधिकारी और जिला प्रधान के विवाद इतना तूल पकड़ लेते हैं कि सब काम ठप पड़ जाते हैं।

इस काले पक्ष के साथ ही उज्ज्वल पक्ष

को नहीं भुला देना चाहिए जैसे जम्मू कश्मीर, उत्तरांचल और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली को छोड़ सभी राज्यों/संघ क्षेत्रों ने संविधान के प्रावधानों के अनुसार कानून बनाकर ग्रामीण क्षेत्रों में संघीय लोकतांत्रिक प्रणाली की नींव डाल दी है। इतना ही नहीं, झारखंड और पांडिचेरी को छोड़ बाकी राज्यों और संघ क्षेत्रों में चुनाव भी कराए गए हैं। कुछ राज्यों में तो प्रत्येक पांच वर्ष में चुनाव भी हुए हैं। विभिन्न पंचायती राज संस्थाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की एक चौथाई सीटों तथा महिलाओं की एक तिहाई सीटों के आरक्षण की व्यवस्था कर लोकतंत्र के एक बड़े महायज्ञ का आयोजन किया गया है। महायज्ञ इसलिए कि ग्राम स्तर पर 2,27,698 पंचायतें, मध्यवर्ती स्तर पर 5906 पंचायतें, और जिला स्तर पर 474 पंचायतें देशभर में गठित की गई हैं। इन पंचायतों को, उन्हीं द्वारा चुने गए लगभग 34 लाख प्रतिनिधि चला रहे हैं। लोकतंत्र का इतना व्यापक आधार विश्व में किसी भी विकसित, अविकसित या विकासशील देश में नहीं है। इस अधिनियम में 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले प्रत्येक राज्य में पंचायती राज की त्रि–स्तरीय प्रणाली लागू ही नहीं हुई है, बल्कि वह अनेक मामलों में अच्छा काम भी कर रही हैं।

अखिल भारतीय पंचायत अध्यक्ष सम्मेलन में सभी नेता और प्रतिनिधि इस बात पर सहमत थे कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आगे बढ़ाने और जड़ों तक उसे मजबूत बनाने के लिए पंचायतों को आर्थिक और प्रशासनिक दृष्टि से अधिक स्वतंत्र और स्वावलंबी बनाया जाए। हाल ही में आरंभ किए गए कार्यक्रम जैसे संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, स्वजलधारा, सफाई, जल संग्रहण, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण तथा शिक्षा जैसे क्षेत्रों में लाभार्थियों की पहचान करने, परियोजनाओं का चयन करने, निरीक्षण, करवसूली, धनराशि आवंटित करने और 10,000 करोड़ से 12,000 करोड़ रुपये मूल्य के अनाजों के वितरण जैसे काम पंचायतों को सौंपे गए हैं। लेकिन देखा गया है कि जिस तरह महिला सशक्तिकरण का सभी द्वारा समर्थन किए जाने के बावजूद महिलाएं आज भी अशक्त और कमजोर हैं,

तालिका–1

(रुपये में)

जनसंख्या	ग्राम पंचायत 5,001 तक और 5,000 से अधिक	खंड 50,001 तक और 50,000 से अधिक	जिला 10,00,001 तक और 10,00,000 से अधिक
नकद प्रोत्साहन	2 लाख चार लाख	10 लाख और 20 लाख	30 लाख और 50 लाख
व्यक्ति को प्रोत्साहन	10,000	20,000	30,000
संगठन को प्रोत्साहन	20,000	35000	50,000

उसी तरह पंचायती राज संस्थाओं की मजबूती का सभी दलों और वर्गों द्वारा समर्थन किए जाने के बावजूद वे आज भी कमजोर और बेबस हैं। उन्हें कार्यों के साथ–साथ कार्य संचालन के लिए धन और कार्याधिकारियों का तत्काल सौंपा जाना भी अत्यावश्यक है। इसी पक्ष को मजबूत बनाने के लिए नया संविधान संशोधन विधेयक लाने की महत्वपूर्ण घोषणा लोकसभा में की गई।

दूसरी घोषणा उस इनामी योजना की है जिसके अंतर्गत अपने–अपने इलाकों में अच्छा काम कर दिखाने वाली जिला पंचायतों, खंड समितियों और ग्राम पंचायतों को नकद पुरस्कार दिया जाएगा। ग्राम विकास राज्यमंत्री श्री अन्ना साहब एम.के. पाटिल ने 25 जुलाई, 2003 को राज्यसभा को बताया कि पंचायती राज संस्थाओं के कुशल संचालन के लिए दस लाख से 30 लाख रुपये के पुरस्कार दिए जाएंगे। अच्छा काम कर दिखाने के लिए छह जोनों की एक–एक जिला पंचायत यानी कुल छह जिला पंचायतों को तीस–तीस लाख रुपये, बारह मध्यवर्ती पंचायतों को बीस–बीस लाख रुपये और पचास ग्राम पंचायतों को दस–दस लाख रुपये की नकदराशि दी जाएगी। इस पुरस्कार प्रोत्साहन योजना से पंचायतों को अपने कामकाज के नए और ऊंचे मानदंड निर्धारित करने और उन्हें मूर्तरूप देने की एक होड़–सी लग जाएगी। इससे पंचायतों की छवि निरंतर निखरती चली जाएगी तथा ग्रामवासियों की भागीदारी नए–नए आयाम छूने लगेगी। तीसरी घोषणा ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा देहाती इलाकों में सफाई को बढ़ावा देने के लिए निर्मल ग्राम पुरस्कार योजना के रूप में की गई है। यह प्रोत्साहन योजना शत–प्रतिशत सफाई के लिए ग्राम पंचायतों, खंडों और जिलों के लिए होगी। घरों के शौचालयों की शत–प्रतिशत सफाई और स्कूलों की शत–प्रतिशत सफाई के लिए पुरस्कार दिया जाएगा। इसके तहत क्षेत्र को खुले में शौच या मल त्याग से मुक्त रखना और पर्यावरण को साफ–सुथरा रखना जरूरी होगा। अपने क्षेत्रों में सफाई के लिए प्रेरक शक्ति के रूप में काम करने वाले व्यक्ति और संगठन विशेष को भी निर्मल ग्राम पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा। यह योजना 2003–2004 से ही लागू की जा रही है। नकद प्रोत्साहन राशि का विवरण तालिका–1 में दिया गया है।

पंचायती राज संस्थाओं को मिलने वाली प्रोत्साहन नकद राशि का उपयोग अपने–अपने क्षेत्रों में सफाई सुविधाओं को बनाए रखने और बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। इस काम में ठोस और तरल कचरे–मेले के निपटान तथा सफाई स्तर को बनाए रखने पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा।

जुलाई का महीना इसलिए भी महत्वपूर्ण माना जाएगा कि **उच्चतम न्यायालय ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के इस निर्णय को बरकरार रखा कि दो से अधिक बच्चों वाला कोई भी व्यक्ति पंचायत के सरपंच या उप सरपंच का पद ग्रहण नहीं कर सकता।**

योजनाएं एक निश्चित दिशा में बढ़ती हैं और अपनी समयावधि में कुछ आगे–पीछे पूरी हो जाती हैं लेकिन जनसंख्या वृद्धि न तो कोई लक्ष्मण रेखा मानती है और न कहीं रुकने या नियोजित ढंग से बढ़ने का नाम लेती है। वह तो उफनते नदी–नालों की तरह

है जिसके सामने सीमा के बंधन कोई मायने नहीं रखते। सन् 1950 के दशक से नियोजित आधार पर देश का आर्थिक विकास जिस गति से हुआ है, उससे अधिक गति और व्यापकता से आबादी बढ़ी है। नतीजतन आर्थिक विकास के लाभ मिट्टी में मिल जाते हैं। दूसरे, अगर सरकारों ने 1947 में स्वाधीनता के सूर्योदय के साथ ही या चंद वर्षों बाद परिवार परिसीमन पर ध्यान केंद्रित किया होता तो आज जनसंख्या विस्फोट और उससे उत्पन्न बुराइयों और समस्याओं का सामना देशवासियों को नहीं करना पड़ता। सरकारों की ढुलमुल नीति के कारण संजय गांधी का सीमित परिवार का सपना आरंभ में ही बिखर गया। कहीं मजहब तो कहीं बाल विवाह तो कहीं रूढ़ियां और अंधविश्वास आड़े आते रहे हैं। लेकिन कौन–सा मजहब और कौन–सी पंचायत चाहेगी कि उनकी परिधि में आने वाले लोगों को दो वक्त रोटी नसीब न हो और वे आधा पेट या खाली पेट चारपाई पर करवटें लेते हुए अपने को कोसते रहें या फिर गरीबी की धधकी ज्वाला को शांत करने के लिए लूटपाट, जोर जबर्दस्ती और हिंसक कार्यों में लिप्त हो जाएं।

इसमें दो राय नहीं कि देश में जनसंख्या वृद्धि की गति शहरों की अपेक्षा गांवों में अधिक है और अगर ग्रामीण संस्थाओं के निर्वाचित नेता दो बच्चों के मानदंड का पालन करें और अपने क्षेत्र के लोगों के सामने आदर्श प्रस्तुत करें तो उनकी देखादेखी परिवार परिसीमन को गति मिलेगी जिससे सीमित आय वाले परिवारों में भी खुशियां भर सकती हैं। न्यायालय का निर्णय इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि परिवारों को छोटा रखने के लिए मनाने–समझाने या जोर–जबर्दस्ती के सभी उपायों को अपेक्षित सफलता नहीं मिली है।

न्यायालय के फैसले से उत्साहित होकर स्वास्थ्य संबंधी मामलों की नीति–निर्धारक संस्था केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण परिषद के गत 29 अगस्त को समाप्त हुए दो दिन के सम्मेलन में सभी राज्यों के स्वास्थ्य मंत्रियों ने भी सर्वसम्मति से सिफारिश की कि चुनाव लड़ने के लिए दो बच्चों की अनिवार्यता को कानून बनाया जाए। चाहे कोई ग्राम प्रधान हो या सांसद– सभी जन प्रतिनिधियों के लिए दो बच्चों का मानदंड लागू किया जाए। जब छह राज्यों दिल्ली, राजस्थान, हरियाणा, गोवा, कर्नाटक और महाराष्ट्र में इस आशय का कानून पहले से ही लागू है, तो फिर इसे संसद में पारित कराने में ढील कैसी और वह भी तब जब राज्यसभा में दो बच्चों के मानदंड के निर्धारण का विधेयक पिछले छह वर्षों से विचाराधीन है। पंचायत अध्यक्ष सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने अपने समापन भाषण में कहा था **"मजबूत भारत के लिए आइए हम गांवों को मजबूत बनाएं, समृद्ध भारत के लिए आइए हम अपने गांवों को समृद्ध बनाएं, और आत्मनिर्भर भारत के लिए, आइए हम अपने गांवों को आत्मनिर्भर बनाएं"।** ❑

268, सत्य निकेतन,
मोती बाग, नई दिल्ली–110021

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/ चाहती हूं/ चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

.....

पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग,

पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066

*कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को नई दिल्ली में देय हो।*

अश्वगंधा एक बहूपयोगी फसल

☞ रत्नेश कुमार राव

अश्वगंधा भारत में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण औषधीय फसल है जिसमें कई तरह के एल्केलॉइड्स पाए जाते हैं। इस पौधे को शक्तिवर्धक माना जाता है। सोलेनेसी कुल का यह पौधा विथानिया सोमनीफेरा वैज्ञानिक नाम से जाना जाता है। हिंदी में इसे असगंधा, अश्वगंध, नागोरी असगंध तथा अंग्रेजी में विंटर चैरी और लैटिन में 'विथानिया सोमनीफेरा' कहते हैं।

अश्वगंधा का उत्पादन देश के अनेक भागों में कुछ गरम और कुछ साधारण प्रांतों में विशेषकर पश्चिम के शुष्क प्रदेशों में अधिक होता है। भारत के अतिरिक्त यह लंका, अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, सिंध, भूमध्यसागरीय प्रदेश, उत्तमाशअंतरीय आदि देशों में पाई जाती है। मालवा में इसकी खेती की जाती है। अब भारत में इसकी खेती विभिन्न प्रदेशों यथा – उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बंगाल, कर्नाटक, केरल आदि में हो रही है।

इसका पेड़ बैंगन के पौधे की भांति सघन होता है। पौधे की ऊंचाई 4–5 फुट होती है। शाखाएं टेड़ी–मेढ़ी तारकावार रोमयुक्त होती हैं। पुष्प प्रायः 5 एक साथ सचूड़ाकार गुच्छों में, छोटे हरिताभ या पीताभ पत्र कोणों में निकलते हैं। फल का आकार मटर के समान होता है और पकने पर फल लाल हो जाते हैं। फलों से दूध जम जाता है। जड़ें मूली की तरह शंकाकार, मजबूत, चिकनी, बाहर से हल्के भूरे रंग की तथा अंदर से श्वेत होती हैं। मूल स्टार्चयुक्त होता है और ताजी जड़ में अश्व के मूल सदृश गंध आती है। इसलिए इस पौधे को अश्वगंध कहते हैं। इसकी जड़ हम उपयोग में लाते हैं।

इसकी जड़ में उड़नशील तेल, रवेदार विथेनियाल नामक पदार्थ, हेंड्रियाकॉन्टेन फाइटोस्टेराल तथा तैल पदार्थ होते हैं। इनके अतिरिक्त इसमें 3 विभिन्न क्षाराभ (एल्केलॉइड्स) होते हैं जिनमें से सोम्निफेरिन रवेदार होता है।

औषधीय गुण और उपयोग

तिक्त तथा कषाय रसयुक्त, उष्णवीर्य, बलकारक, अत्यंत शुक्रवर्द्धक रसायन एवं वात, कफ, शोथ और क्षय को दूर करने वाला होता है। अश्वगंध उष्ण, मधुर, वल्य, रसायन, वृश्य एवं शोथहर है। क्षय, बालशेष, सुखण्डी, वार्धक्य आदि में इसके 1/2–1 तोला चूर्ण को थोड़े वृत्त में गरमकर दूध एवं शर्करा में मिला देते हैं। यह उत्तम पौष्टिक है। बच्चों के लिए यह बहुत ही अच्छा है। इससे बच्चों का सूखना बंद हो जाता है। स्त्रियों के कटिशूल एवं श्वेत प्रदर में इससे लाभ होता है। इसके बीज, फल, छाल एवं पत्तियों को विभिन्न शारीरिक व्याधियों के उपचार में प्रयुक्त किया जाता है। आयुर्वेद में इसे गठिया के दर्द, जोड़ों की सूजन, पक्षाघात तथा रक्तचाप आदि जैसे रोगों के उपचार में इस्तेमाल करने की संस्तुति की गई है। त्वचा रोग, घावों को भरने तथा सूजन को दूर करने में इसकी पत्तियां काफी उपयोगी होती हैं। वर्तमान में देश की लगभग सभी अग्रणी कंपनियां अश्वगंधा के टेबलेट या कैप्सूल विभिन्न ब्रांडों के नाम जैसे एनर्जिक–31, थर्टीप्लस, थ्री नाट थ्री, वीटाएक्स गोल्ड, रसायन वटी शिलाजीत आदि नामों से बना रही हैं। इनमें मात्र 5–10 मि.ग्रा. अश्वगंधा पाउडर भरकर 10–15 रुपये प्रति कैप्सूल बेचा जा रहा है जबकि अश्वगंधा की तैयार फसल का विक्रय मूल्य मात्र 40–80 रुपये प्रति कि.ग्रा. ही है।

खेती के लिए उपयुक्त भूमि

बलुई, दोमट या हल्की लाल मिट्टी, जिसका पी.एच. मान 7.5 से 8.0 हो तथा जलजमाव न होता हो, अश्वगंधा की खेती के लिए उपयुक्त होती है। अत्यंत उपजाऊ भूमि न होने पर भी इसकी फसल अच्छा लाभ देती है। अगस्त माह के अंत में जब वर्षा का आवेग कुछ कम हो जाए, तब इसकी फसल खेतों में लगाते हैं। इसीलिए यह एक पीछेती फसल होती है। ऐसे क्षेत्र जहां 650 से 750 मि.मी. वर्षा होती हो, वहां इसका उत्कृष्ट उत्पादन किया जा सकता है।

खेत की तैयारी

जिस खेत में लगाना हो, पहली बरसात के पश्चात उस खेत को एक बार जोतकर उसमें जैविक खाद (देसी गाय के गोबर से बनने वाली खाद) का छिड़काव करने के बाद उसमें पाटा चलाकर छोड़ देना चाहिए।

नर्सरी तैयार करना

जुलाई के प्रथम या द्वितीय सप्ताह के प्रारंभ में क्यारी बनाकर एक एकड़ के लिए 2 किग्रा. अश्वगंधा का बीज क्यारी में लगाते हैं। पूर्ण नमीयुक्त क्यारी में खाद डालने के बाद 2 किग्रा. अश्वगंधा का बीज बराबर छिड़ककर उसके उपरांत गोबर मिट्टी और बालू समभाव में मिलाकर छिड़क देते हैं ताकि बीज पूर्ण रूप से ढक जाएं। तत्पश्चात केले के पत्ते अथवा जूट की बोरी भिगोकर उसपर डाल देते हैं। नियमित रूप से पानी का छिड़काव करते रहना चाहिए।

पौधों को खेत में फैलाना

तीस से पैंतीस दिनों के उपरांत जब पौधे 3–4 इंच के हो जाएं, तब क्यारी (नर्सरी) में नमी बनाकर पौधों को उखाड़ते हैं। उखाड़ते समय हमें ध्यान देना होगा कि पौधा किसी प्रकार से क्षतिग्रस्त न हो। जिस खेत को पाटा देकर छोड़ दिया गया है, पुनः एक बार जुताई कर उसमें पाटा देकर उखाड़े गए पौधों को 60 से.मी. × 60 से.मी. की दूरी पर लगाते चले जाते हैं। पौधे लगाने के बाद अगर तत्काल बारिश न हो तो कृत्रिम साधनों से हल्की सिंचाई करते हैं ताकि पौधे गिरने न पाएं।

छिड़काव विधि द्वारा बीज बोना

छिड़काव विधि द्वारा भी अश्वगंधा की बुआई की जाती है। अश्वगंधा का बीज काफी हल्का है अतः छिड़कने से पहले इसे बलुई मिट्टी या राख के साथ मिलाकर छिड़कते हैं। एक एकड़ क्षेत्रफल में 4–5 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। खेत की जुताई करने के बाद इसे खेत में छिड़ककर हल्का पाटा देते हैं ताकि बीज मिट्टी से ढक जाएं।

बीमारियां एवं उनकी रोकथाम

अश्वगंधा की फसल पर वैसे तो किसी प्रकार की कीटव्याधि का असर प्रायः नहीं देखा जाता। कभी–कभी फसल पर माहो कीट अथवा झुलसा का प्रकोप होता है। यदि इस प्रकार की स्थिति कभी आए तो उस पर गोमूत्र (देसी गाय का मूत्र) अथवा जैविक कीटनाशकों का प्रयोग कर उनकी सफलता–पूर्वक रोकथाम की जा सकती है। ध्यान देने की बात है कि पूर्ण रूप से जैविक पद्धति द्वारा उत्पादित प्रत्येक जड़ी–बूटी की कीमत बाजार में हमेशा ऊंची रहती है। अतः किसी प्रकार के रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

अश्वगंधा की खेती में होने वाले आय–व्यय का विवरण (प्रति एकड़)

क्र.स.	विवरण	रकम
अ.	**खर्च का विवरण**	
1.	खेत की तैयारी पर होने वाला व्यय	5,00.00
2.	बीज पर होने वाला व्यय (2 कि.ग्रा. 50 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से)	100.00
3.	सिंचाई, निराई–गुड़ाई तथा पौधों के संरक्षण पर व्यय	1,000.00
4.	जड़ें इकट्ठी करने, साफ करने, वर्गीकरण करने तथा पैकिंग आदि	2,000.00
5.	गोबर खाद 500 रुपये प्रति ट्राली	1,000.00
	कुल लागत	**4,600.00**
ब.	**आय का विवरण**	
1.	सूखी जड़ों की बिक्री से होने वाली आय (3 क्विंटल जड़ें 7000 रुपये प्रति क्विंटल की दर से)	21,000.00
2.	बीजों के रूप में होने वाली आय (30 कि.ग्रा. बीज 50 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से)	1,500.00
	कुल लाभ	**22,500.00**
	कुल लाभ–कुल लागत (22,500 – 4,600) शुद्ध लाभ प्रति एकड़	17,900.00

फसल की कटाई

लगभग 150–170 दिनों में अश्वगंधा की फसल तैयार हो जाती है। जब पौधों की पत्तियां पीली पड़ने लगें तथा पौधों का रंग लाल होने लगे, तब समझना चाहिए कि फसल परिपक्व हो चुकी है। तदुपरांत हल्की सिंचाई के बाद पौधों को जड़ समेत उखाड़ लिया जाता है। अगर अगस्त माह में पौधों का विरलीकरण किया गया है तो सामान्यतः दिसंबर–जनवरी तक फसल उखाड़ने लायक हो जाती है।

जड़ों एवं बीजों का वर्गीकरण एवं संरक्षण

जड़समेत पौधों को उखाड़ने के पश्चात जड़ से लगभग 2–3 सेमी. ऊपर से काटकर जड़ और तने को अलग कर लिया जाता है। सुखाने हेतु जड़ों के 7–10 सेमी. लंबाई में टुकड़े कर लिए जाते हैं। मोटी जड़ों की ग्रेडिंग कर उसे अच्छी प्रकार सुखा लेते हैं फिर उसका साफ–सुथरे तथा नमीयुक्त स्थान पर भंडारण करते हैं। पके हुए फलों को भी तोड़कर सुखाते हैं। फल जब सूख जाते हैं तो उन्हें डंडे अथवा लाठी की मदद से पीटकर उनके बीज को सुखाकर एकत्र कर लेते हैं और इसे प्लास्टिक की थैलियों में सीलबंदकर रख देते हैं। एक एकड़ क्षेत्रफल में अश्वगंधा की फसल से लगभग 2.5 से 3 कुंतल सूखी जड़ और 20–30 कि.ग्रा. बीज प्राप्त होता है।

आय–व्यय

अश्वगंधा की खेती पर प्रति एकड़ लागत लगभग 4,000 रुपये आती है। जबकि प्रति एकड़ उत्पादन से लगभग 20,000 रुपये की प्राप्ति होती है। जैसा ऊपर कहा गया है कि यदि जैविक विधि से उत्पादन किया जाए तो 1,500से 2,000 रुपये तक होने वाले खाद के खर्च को बचाया जा सकता है।

अश्वगंधा एक बहूपयोगी लाभदायक फसल है। इसको कोई भी जानवर खाता नहीं है अतः सुरक्षा की विशेष व्यवस्था भी नहीं करनी पड़ती। कम लागत और कम श्रम में किसानों के लिए यह अच्छी व्यावसायिक फसल सिद्ध हो रही है। ❑

ग्राम–करौंदी, पो.–सुसुवाही,
जिला वाराणसी–221005

ऊनी गलीचा उद्योग : मरूक्षेत्र बाड़मेर में अकाल का विकल्प

☞ पी.आर. त्रिवेदी

विश्व में बढ़ती भारतीय गलीचों की मांग ने न केवल देश के लिए भारी विदेशी मुद्रा अर्जित करने का मार्ग प्रशस्त किया बल्कि बाड़मेर जैसे दूरस्थ ग्रामीण मरुक्षेत्रों में रोजगार के जबर्दस्त अवसर बढ़ाने की प्रचुर संभावनाएं उत्पन्न की हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हस्तनिर्मित कालीन उद्योग को तेजी से देश में बढ़ावा देने के लिए समयबद्ध कार्ययोजना तैयार कर रोजगार के अवसर बढ़ाने पर विशेष बल दिया जाए।

गलीचा पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थलीय बाड़मेर जिले का एक ऐसा हस्तशिल्प है जोकि अब तक निर्यात के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका अदा करता रहा है। शिल्पकारिता एवं शिल्पकारों के उम्दा कौशल के लिए देश–विदेश में विख्यात मरुस्थलीय क्षेत्र के हस्तशिल्प उद्योग की अनूठी एवं विलक्षण पहचान रही है। इसमें ऊनी गलीचा उद्योग तो बाड़मेर की शान ही रहा है। इस उद्योग ने न केवल यहां के शिल्पियों की आजीविका एवं आर्थिक स्वावलंबन में अपनी अहम भूमिका निभाई है बल्कि स्थायी अकाल प्रभावित क्षेत्र में रोजगार का संसाधन बन परंपरागत पशुपालन उद्योग को भी अपरोक्ष रूप में पोषित किया है।

कालीन/गलीचा ऊनी निर्माण कला एक श्रमसाध्य योग है और कालीन दस्तकारों को अन्य शिल्पियों के मुकाबले अधिक धैर्य भी रखना पड़ता है। गलीचा कला यहां के दस्तकारों के मन की अनुकृति है तथा इसे शिल्पियों के मन–मस्तिष्क के कोमल भावों की प्रतिकृति भी कहा जा सकता है। कालीन कला का बाड़मेर में उतना ही पुराना इतिहास है जितना कि मानव के विचारों को गलीचा बुनाई के स्वरूप में ढालने का। बाड़मेर क्षेत्र में कलात्मक गलीचों का सृजन दस्तकारों की अपनी मूलभूत प्रवृत्ति के लिए अनवरत रूप से चला आ रहा है। आधुनिक–काल में यहां के दस्तकारों ने युग को पहचाना तथा गलीचा कला का नया किंतु अद्भुत संसार रचा।

गौरतलब है कि गलीचा व्यवसाय 10 से 20 वर्ष तक की आयु वर्ग के तरुणों की कला कौशल पर निर्भर करता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि कार्पेट बुनाई में इन तरुणों की सिद्धहस्त पतली अंगुलियां ही अपना कमाल दिखा सकती हैं। बीस वर्ष की उम्र के पश्चात् ये युवा गलीचा निर्माण कार्य में सुपरवाइजरी का कार्य करने लगते हैं। किशोर दस्तकार गलीचा हस्तशिल्प की रीढ़ होता है। एक तरुण चार घंटे में आधा वर्ग फुट कार्पेट का निर्माण आसानी से कर लेता है तथा उत्पादित कार्पेट पर 60 रुपये के लगभग पारिश्रमिक उसे प्राप्त होता है। इस कार्य के लिए तरुणों को मात्र एक सप्ताह के प्रारंभिक प्रशिक्षण की जरूरत होती है तत्पश्चात् निरंतर अभ्यास से उसे उत्तरोत्तर सिद्धहस्तता प्राप्त होती रहती है। जिन किशोरों को 11–12 वर्ष की उम्र में कालीन

बुनाई का प्रशिक्षण प्राप्त हो जाता है वे ही आगे चलकर कुशल कामगार सिद्ध होते हैं।

निरंतर अभ्यास से इन किशोर दस्तकारों की अंगुलियों की थिरकन, मस्तिष्क की सजगता एवं उत्साह तो काम के दौरान देखते ही बनता है। शुरू–शुरू में ये किशोर कालीन बुनाई में गांठ बांधने का कार्य करते हैं तथा वास्तविक बुनाई का कार्य तो 14 वर्ष की आयु में प्रारंभ होता है। एक करघे पर 3–4 तरुण कार्य करते हैं तथा एक गलीचे के निर्माण में 60 व्यक्तियों तक को रोजगार प्राप्त होता है जिसमें गलीचा बुनाई के अलावा धागा सुलझाने, गोले लपेटने, धुलाई, क्लिपिंग, गुलतराशी, ठर्री, कैंची आदि अनेक कार्य शामिल हैं। बाड़मेर मरुक्षेत्र में सदियों से प्रचलित कालीन हस्तशिल्प के घरेलू उद्योग में न केवल श्रम की गरिमा प्रतिपादित होती है बल्कि उसमें शिल्पकारों के कला–कौशल की अभिव्यक्ति भी परिलक्षित होती है।

देश की विभिन्न हस्तशिल्प विधाओं में विश्व के 70 प्रतिशत देशों में वर्षों से निर्यात हस्तशिल्प गलीचों के निर्माण में बाल श्रमिकों का शोषण होने के भावनात्मक प्रचार से विश्व बाजार में गलीचों की मांग में एकाएक कमी जरूर हो गई थी । भारत में हाथ से निर्मित गलीचों का वर्ष 1985–86 में एक अरब 64 करोड़ रुपये का निर्यात हुआ था जबकि आज भारत से लगभग 21 अरब रुपये के कालीन विदेशों में निर्यात किए जा रहे हैं। लेकिन नब्बे के दशक के प्रारंभ में 'बाल मजदूरी' के मामले ने कालीन खरीदार देशों में इस व्यापार को बुरी तरह प्रभावित किया था जिसकी वजह से देश में कालीन बिक्री से प्राप्त राजस्व में एक चौथाई तक गिरावट आ गई थी। इससे एक ओर देश में विदेशी मुद्रा की आय में भारी गिरावट आई वहीं दूसरी ओर देश के गलीचा दस्तकारों के सम्मुख रोजीरोटी की समस्या भी खड़ी हो गई थी।

ज्ञातव्य रहे कि पिछले कुछ वर्षों में बाड़मेर के गलीचा उद्योग को ऐसा ग्रहण लगा कि वर्षों पुराना यह प्रतिष्ठित उद्योग बर्बादी के कगार पर पहुंच गया जिसने देश के गलीचा निर्यात को भी प्रभावित किया। इसकी मुख्य वजह बाल श्रमिक मुद्दे के साथ–साथ स्थानीय कार्पेट व्यावसायियों का लालच एवं कुशल कामगारों के स्थायित्व की कमी रही। ऐसे व्यापारी अल्पमार्जिन पर गलीचा व्यवसाय करते रहे, कार्पेट गुणवत्ता के साथ खिलवाड़ किया, कामगारों की मजदूरी दर बाजार सूचकांक के अनुपात में समय पर नहीं बढ़ाते जिससे प्रभावित होकर कुशल एवं प्रशिक्षित दस्तकार दूसरे उद्योगों की ओर उन्मुख होने लगते।

गलीचा उद्योग अत्यंत संवेदनशील उद्योग है तथा काम की गुणवत्ता, कलात्मकता के कारण शिल्पियों के अनुभव के स्तर पर निर्भर करती है। वर्षों पुराने अतिकुशल दस्तकारों के रोजी–रोटी के लिए अन्य उद्योगों की ओर उन्मुख होने के कारण इस उद्योग में हमेशा कुशल शिल्पियों का अभाव बना रहता है और यही अभाव इस उद्योग को पतन की ओर धकेलकर सब गुड़गोबर कर देता है। इससे निवेशक आर्थिक संकट में फंस जाता है और इस उद्योग का स्थायित्व डगमगाने लगता है। इन परिस्थितियों में अकुशल कामगारों को गलीचा निर्माण के लिए अग्रिम रकम दे कर व्यापारियों को लाकर उन पर प्रशिक्षण में समय एवं धनराशि भी खर्च करनी पड़ती है। लेकिन उन्हें गलीचा निर्माण का पूर्ण ज्ञान एवं अनुभव नहीं होने के कारण माल की गुणवत्ता में भी गिरावट आने लगती है। तैयार गलीचे को पूर्ण गुणवत्ता के अभाव में खरीददार एवं निर्यातक 'रिजेक्ट' कर देते हैं। तैयार माल के 'रिजेक्ट' हो जाने पर व्यापारी कामगारों का गला काट अपनी क्षतिपूर्ति का प्रयास करता है जिससे अर्धकुशल या अकुशल कामगार भाग छूटता है। तैयार माल के समय पर उठाव के अभाव में व्यापारी का वित्तीय संतुलन बिगड़ने लगता है और उसका गलीचा उद्योग ठप हो जाता है।

इस प्रकार का दौर बाड़मेर के कालीन उद्योग में अक्सर आता रहता है जिससे यह शानदार उद्योग स्थायित्व प्राप्त नहीं कर पाता और व्यापारियों को बर्बाद कर देता है। कुछ व्यापारी इस धंधे के गिरते हालात के दौर से उबरने के लिए पुनः नए सिरे से उद्योग स्थापित करने की हिम्मत भी जुटाते हैं तो अन्य खुराफाती व्यापारी ईर्ष्या के कारण मुश्किल से अर्धकुशल हुए कामगारों को येन केन प्रकारेण लालच दे कालीन उद्योग को पुनः संकट में डाल देते हैं। कालीन उद्योग में कामगारों को अग्रिम रकम देने की प्रथा सबसे खतरनाक प्रक्रिया है। इससे बेईमान एवं धूर्त व्यापारी तो जैसे–तैसे कामगारों से काम लेने में सफल हो जाते है परंतु इज्जतदार एवं भले व्यापारी द्वारा दिया गया अग्रिम पैसा कर्जदार कामगारों में डूब जाता है। अग्रिम रकम अदायगी का प्रचलन कामगारों की आदत भी बिगाड़ देता है।

शताब्दियों की तुलना में पिछली कुछ दशाब्दियों में बाड़मेर में अकाल की तीव्रता में कमी जरूर आई है। इसकी वजह से अब 80 प्रतिशत कुशल कामगार वर्षाऋतु में कृषि कार्य के लिए 6–8 माह व्यस्त हो जाते हैं तथा शेष में कालीन बुनाई एवं अन्य कार्य करते हैं। वर्ष की अवधि में आधे से अधिक कुशल कारीगरों की कमी बाड़मेर में गलीचा उद्योग को जबर्दस्त प्रभावित करती है तथा गलीचों का नियमित उत्पादन नहीं हो पाने के कारण व्यापरियों का बाजार से संपर्क टूट जाता है। कई बार कृषि पैदावार के अच्छा हो जाने पर कुशल एवं अर्धकुशल कामगार अपनी बगैर कमाए आराम से गुजारे की प्रवृत्ति के कारण वर्ष के शेष चार माह गलीचा निर्माण की ओर मुंह भी नहीं करते हैं जिससे इस व्यवसाय का भारी मांग के बावजूद बंटाधार हो जाता है।

वर्ष 1991–92 में तो बाड़मेर जिले में कालीन उद्योग व्यवसाय के दृष्टिकोण से शीर्ष पर था तथा बाड़मेर एवं अंतर्राष्ट्रीय सीमावर्ती गडरा क्षेत्र में लगभग 2500 हथकरघे एवं 10 हजार कामगार ऊनी गलीचा उद्योग में कार्यरत थे। प्रतिवर्ष 10–15 करोड़ रुपये के गलीचे बाड़मेर जिले में उत्पादित होते थे तथा स्थानीय 20 फर्में जयपुर, दिल्ली के निर्यातकों के लिए ऊनी गलीचे तैयार करवाती थीं। बाड़मेर के एक–दो व्यापारी स्वयं भी 5 करोड़ तक की बिक्री के निर्यातक रह चुके हैं। लेकिन दुर्भाग्य से बाड़मेर में उत्पादित गलीचों की गुणवत्ता में गिरावट, बाजार भाव के बढ़ने, कुशल कामगारों की मजदूरी नहीं बढ़ने के चलते ये कामगार गलीचा उद्योग से विमुख होते गए। इस प्रकार वर्ष 1995–96 तक कुल 300 से

400 हैंडलूम ही चालू रह सके जिससे गलीचों का वार्षिक उत्पादन गिरते–गिरते एक करोड़ रुपये तक आ पहुंचा। तब से लेकर आज तक कुछ गलीचा व्यापारियों ने कुशल दस्तकारों को अच्छी मजदूरी देकर गलीचों की गुणवत्ता में सुधार का प्रयास भी किया जिसके उत्साहवर्धक संकेत भी मिले लेकिन वांछित सफलता मिलना तो भारत सरकार एवं राज्य सरकार के सहयोग के साथ–साथ गलीचा उद्यमियों में परस्पर प्रतिस्पर्धा की भावना के बिना मुश्किल ही प्रतीत होती है।

वास्तविकता तो यह है कि बाड़मेर में अकाल पड़ने एवं खाद्यान्न समाप्त हो जाने पर भुखमरी के हालात में अकुशल ग्रामीण गलीचा उद्योग की ओर रोजगार प्राप्ति के लिए आकर्षित होते हैं। गलीचा उद्योग के लिए प्रशिक्षण की माकूल व्यवस्था नहीं होने के कारण ग्रामीण गलीचा इकाइयों में ही प्रशिक्षण के रूप में श्रम करते हैं। व्यवस्थित एवं विधि विधान से प्रशिक्षण नहीं मिल पाने के कारण उनमें गलीचा उत्पादन के प्रति वांछित उत्साह एवं रुचि उत्पन्न नहीं हो पाती जिससे गुणवत्ता भी गिर जाती है। उद्योग से संबंधित कुछ सरकारी अधिकारियों का बाल श्रमिक के नाम पर भय भी कालीन व्यापारी इस उद्योग के विकास में कुछ हद तक बाधा मानते हैं।

यह सर्वथा सत्य है कि गलीचा निर्माण में बच्चों की मेहनत का उपयोग होता है जोकि बाल श्रमिक से संबद्ध कुल 12 कानूनों में से अधिकांश के दायरे में आता है। बाल मजदूरी हालांकि एक अपराध अवश्य है लेकिन कालीन व्यवसाय का मेरुदंड तो तरुण (किशोर बालक) ही होता है। बिना तरुणों की भागीदारी के कालीन बनाया जाना संभव ही नहीं है। इस प्रकार बाल मजदूरी के नाम पर इस उद्योग पर रोक लगा देना न केवल इस उद्योग के अस्तित्व के विरुद्ध है बल्कि गरीब एवं बेसहारा बच्चों के जीवनयापन में बाधा पहुंचाना भी। दुनिया में 15 वर्ष से कम उम्र के लगभग 20 करोड़ किशोर अपना अधिकतर समय मजदूरी करने में गुजारते हैं और उन्हें कुछेक जगह परिस्थितिवश अपना शारीरिक एवं मानसिक विकास दांव पर भी लगाना पड़ता है। अधिकतर विकासशील एवं औद्योगिक देशों में माता–पिता अपने बच्चों से घर के खर्च में हाथ बंटाने की उम्मीद रखते हैं।

संयुक्त राष्ट्र बाल आपात कोष (यूनिसेफ) ने भी माना है कि बाल श्रम को हर परिस्थिति एवं हर समय बुरा मानना उचित नहीं है क्योंकि कुछ परिस्थितियों में यह गरीबी से जूझ रहे बालकों के जीवन का आधार होता है। यूनिसेफ की मई, 95 में जारी रिपोर्ट में माना गया कि बच्चों की खरीद–फरोख्त, यौन शोषण, होटलों, खदानों, फैक्ट्रियों, घातक रसायन, ईंट–भट्ठों, पटाखा निर्माण, बीड़ी जर्दा कार्य, एवं घरेलू कार्य में जबरन मजदूरी और शारीरिक दुर्व्यवहार को बालशोषण की श्रेणी में माना जा सकता है।

बाल श्रमिक के संदर्भ में एक ओर मानवीय दृष्टिकोण है तो दूसरी ओर देश और कालीन दस्तकारों का आर्थिक नुकसान भी है। इसके लिए कालीन व्यावसायियों को अपने उत्पादन क्षेत्रों में कार्यरत कामगार तरुणों के कल्याण के लिए पर्याप्त संख्या में कालीन निर्माण प्रशिक्षण केंद्र, शिक्षा केंद्र एवं स्वास्थ्य केंद्र खोलने चाहिए। देश के हथकरघों का पंजीकरण हो तथा इसे कुटीर एवं ग्रामोद्योग के दर्जे के साथ उचित ऋण एवं अनुदान मिलना चाहिए। माता–पिता की देखरेख में बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा के रूप में प्रतिदिन कुछ घंटे गलीचा निर्माण के कार्य को करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि गरीब बच्चे अध्ययन के साथ–साथ स्वावलंबी भी बन सकें।

गलीचा उद्योग देश का एक प्रमुख ग्रामीण उद्योग है लेकिन बुरी तरह से असंगठित एवं बिखरा होने के कारण बुनियादी सुविधाओं से भी वंचित है। इसको स्थायित्व प्रदान करने के लिए ग्रामीण कामगारों के स्वयं के ही 'लूम' होने चाहिए तथा सभी व्यापारियों का एक संगठन होना भी जरूरी है। गलीचा उत्पादन कार्य में निरंतर शोध एवं अनुसंधान की आवश्यकता के साथ सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग तथा देशों द्वारा अपनाई गई सर्वश्रेष्ठ प्रक्रियाओं एवं रणनीतियों को अपनाने से पूर्व उन्हें पूरी तरह से समझने की आवश्यकता है। स्वयं के 'लूम' पर काम करने वाला शिल्पी घर बैठे रोजगार प्राप्त करते काम की गुणवत्ता को भी बनाए रखेगा। गलीचा व्यापारी संघ संगठित होकर कड़े नियम लागू कर सकते हैं जोकि गलीचा व्यवसाय को सशक्त करने के साथ–साथ कामगार एवं व्यापारी के हित के प्रति जवाबदेह भी होगा।

व्यापारियों के संघ के मार्फत ही कामगारों को समय–समय पर प्रशिक्षण एवं नवीनता की जानकारी का प्रबंध होना चाहिए तथा इसके लिए ऐसे लोगों का चयन किया जाए जोकि गलीचा उत्पादन के क्षेत्र में नियमित कार्य करते रहें। कामगारों को व्यापारियों के शोषण से मुक्त रखने के लिए उनकी सहकारी समितियां भी बनाकर उन्हें स्वयं व्यापार का मौका दिया जा सकता है। भारत सरकार के कपड़ा मंत्रालय के तहत कार्यरत गलीचा निर्यात संवर्धन परिषद तथा विकास आयुक्त (हस्तशिल्प) के लाभों एवं गतिविधियों से भी समय–समय पर गलीचा कामगारों को अवगत कराया जाना जरूरी है।

अंत में यही कहा जा सकता है कि **हथकरघा उद्योग हमारी अर्थव्यवस्था का प्रमुख अंग है जिसमें 60 लाख से अधिक बुनकर और दस्तकार कार्यरत हैं। इस उद्योग से लगभग 225 करोड़ डॉलर सालाना की विदेशी मुद्रा की आय देश को होती है।** वर्तमान में देश में गलीचा उद्योग में 25 लाख से अधिक दस्तकार कार्यरत हैं। देश में हाथ से बने कालीनों का कुल निर्यात् प्रति वर्ष 53 करोड़ 30 लाख डॉलर का होता है। विश्व में कालीन उद्योग के कुल व्यवसाय में भारत का हिस्सा 17.69 प्रतिशत है वहीं मूल्य के हिसाब से देश तीसरा एवं मात्रा के हिसाब से पहले स्थान पर है। विश्व में बढ़ती भारतीय गलीचों की मांग ने न केवल देश को भारी विदेशी मुद्रा अर्जित करने का मार्ग प्रशस्त किया बल्कि बाड़मेर जैसे दूरस्थ ग्रामीण मरुक्षेत्रों में रोजगार के जबर्दस्त अवसर बढ़ाने की प्रचुर संभावनाएं उत्पन्न की हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हस्तनिर्मित कालीन उद्योग को तेजी से देश में बढ़ावा देने के लिए समयबद्ध कार्ययोजना तैयार कर रोजगार के अवसर बढ़ाने पर विशेष बल दिया जाए। ❑

186–आदर्श नगर,
पाली, (राज.)–306401

कहानी

समाधान

☞ वेदप्रकाश अमिताभ

राकेश जी को यह देखकर अच्छा लगा था कि इस 'पॉश' कालोनी में भी लोग मिल–जुलकर रहते हैं। वक्त आने पर एकजुट हो सकते हैं।

वह कुछ ही महीने पहले उमेश विहार में आए थे और लगातार कुछ अनुभव ऐसे हुए थे जो अच्छे नहीं कहे जा सकते। वह समझ गए थे कि वह अब अपने पुराने मोहल्ले कैलाशपुरी के रहन–सहन और माहौल से एकदम अलग दुनिया में आ गए हैं। कैलाशपुरी में वो एक ही मकान में बीस वर्ष तक किराएदार रहे थे। वहां कभी नहीं लगा कि वह किराएदार हैं तो मकान वाले अन्य लोग उन्हें छोटा समझते हैं। यहां आकर उन्हें पता चला है कि कोठियों के मालिक किराएदार को हेय समझते हैं, उनसे कोई मेलजोल नहीं रखना चाहते। पिछले महीने इस कालोनी के मंदिर का स्थापना समारोह मनाया गया तो यहां रह रहे किराएदारों को 'प्रसाद' का अधिकारी नहीं समझा गया था।

वैसे नए माहौल में आने का अनुभव पहले उन्हें जमादारिन ने कराया था। कालोनी के सभी घरों में गेट के बाहर सफाई के लिए जमादारिन की सेवाएं लेने का प्रचलन था। राकेश जी की पत्नी ने पड़ोस में काम करने वाली को लगा लिया था। कैलाशपुरी में अक्सर वह जमादारिन को कुछ पुराने कपड़े, बासी परांठे आदि दे देती थीं। वह खुशी–खुशी ले भी जाती थी। इसके पीछे उदारता के साथ–साथ यह स्वार्थभाव भी निहित था कि वह ठीक से काम करेगी, उल्टी–सीधी बातें नहीं करेगी। यहां भी उन्होंने उसी फार्मूले को आजमाना चाहा। उन्होंने बिटिया की एक पुरानी स्कर्ट जमादारिन को देने का मन बनाया। उनका विचार था कि उनकी इस उदारता से वह खुश होगी और नागा कम से कम करेगी। लेकिन जमादारिन ने स्कर्ट देखकर नाक–भौंह सिकोड़ी थी, 'जे का हे भैनजी?'

जब पत्नी ने कहा कि तुम्हारी बिटिया पहन लेगी तो वह नाराज हो गई थी – 'हमाई लल्ली ऐसी उतरन नाय पहने भैनजी। यहां कपड़े के बदले बरतन वाले भौत आवें, बिने दे दियों। मैं तो त्यौहार पैऊ नई साड़ी लेऊंगी।'

बाद में पड़ोस की चौधरानी ने बताया था कि अमीर लोगों ने इसका दिमाग खराब कर दिया है। होली–दिवाली पर किसी मशहूर दुकान की मिठाई मंगवा के दीजिए, नहीं तो मना भी कर सकती है।

जमादारिन के अस्वीकार से पत्नी जहां क्षुब्ध हुई, वहीं राकेश जी को एक खुशी–सी हुई–'चलो, अपनी शर्तों पर जीने की ताकत तो पैदा हुई समाज के इस दबे–कुचले तबके में।' लेकिन जो झटका सब्जीवाले ने दिया था, वह राकेश जी के गले भी नहीं उतरा था।

पत्नी पुराने शहर की तरह मोलभाव करती थीं लेकिन सब्जी वाला समाज में भ्रष्टाचार की तरह मजबूत बना रहता था। वे उससे एक पैसा कम नहीं करा पाती थीं। बल्कि वह चार रुपये किलो वाले आलू पांच रुपये किलो बेचता था। पत्नी सब्जी उसकी तराजू में खुद चढ़ाती थी और देखती थीं कि डंडी तो नहीं मार रहा है। एक दिन सब्जी वाले का धैर्य चुक गया था 'आप ही इतना मोलभाव और झिकझिक करती हो पूरी कालोनी में। क्या गांव से आई हो? सब्जी लेनी हो तो लो, नहीं तो रहने दो। मैं तो

एक दाम लगाता हूं, एक बार में तोलता हूं।' जाते–जाते वह यह बता गया था कि इस गेटबंद कालोनी में सिर्फ उसे और उसके भाई को सब्जी बेचने की इजाजत है। और इजाजत फोकट में थोड़े ही मिल जाती है।

ऐसे अनुभवों के बीच में यह नया अनुभव ठंडी बयार से कम नहीं था। हुआ यह कि 'केबिल' वाले ने एकदम अपने रेट ढाई गुना बढ़ा दिए थे।

'पे चैनल की दरें बढ़ जाने का बहाना लेते हुए उसने एकदम सौ रुपये महीने से ढाई सौ रुपये महीना कर दिया था। कॉलोनी के लोग इस ढाई गुना वृद्धि को हजम नहीं कर पाए थे। उन्होंने केबल वाले से कहा था कि सौ के डेढ़ सौ रुपये कर लो। लेकिन वह कोरा केबल वाला नहीं था। वह शहर का एक प्रमुख भूमाफिया भी था। उसने साफ कहा था कि ढाई सौ नहीं तो केबल नहीं। जो ढाई सौ न देना चाहे, वह केबल कटवा सकता है शौक से।

विकल्प की तलाश में कुछ लोगों ने बगल की एक बस्ती के केबल वाले से बात की थी और उससे डेढ़ सौ रुपये महीने में सौदा पट गया था। कुछ घरों में केबल लग गए तो लगा, समस्या का समाधान हो गया और व्यापार में प्रतियोगिता के चलते कॉलोनी के लोग घाटे में नहीं रहेंगे। शायद हमारे केबल वाले को भी अक्ल आ जाए। उन दिनों अमेरिका इराक को धमकाते–धमकाते एकदम उस पर चढ़ दौड़ा था। हमारे केबल वाले को शायद इसी घटना से प्रेरणा मिली होगी। वह भी उस बस्ती वाले केबल के मालिक पर हावी हो गया। बस्ती का केबल संचालक छोटा–मोटा दादा था, कट्टा जेब में हरदम रखने वाला, लेकिन वह राइफल और विलायती पिस्तौल के आगे घुटने टेक गया। प्रतिद्वंद्वी को चित्त करके लौटती केबलमाफिया की फौज ने उमेश विहार में एक चक्कर लगाया था और बता गई थी कि हमारा कोई विकल्प नहीं है। उमेश विहार हमारा है, हमारे अलावा और कोई यहां कदम नहीं रख सकता है।

तब कॉलोनी के एक छोटे–मोटे उद्योगपति ने कुछ लोगों की बैठक बुलाई थी। सबकी राय थी कि अगर केबल वाला अपनी हठकर्मी पर अड़ा रहता है तो सभी लोग केबल कटवा लेंगे। राकेश जी को इस एकजुटता ने प्रभावित किया था।

पूरी कॉलोनी में एक–दो को छोड़ सबने अपने फैसले को सही ठहराते हुए केबल कटवा लिए थे। राकेश जी भी पीछे नहीं रहे थे। शुरू में केबल कटने पर कष्ट तो हुआ। उन्हें राष्ट्रीय चैनल के समाचारों में खाड़ी युद्ध से संबंधित सनसनीखेज मसाला नहीं मिलता था, जो 'आज तक', 'जी न्यूज' वाले परोसते थे। उनकी पत्नी को दोपहरी काटनी भारी पड़ने लगी। मैट्रो और मुख्य चैनल पर सीरियल तो आ रहे थे, लेकिन वह उनके लिए नए थे। नौ बजे से रात ग्यारह बजे तक आने वाले सास–बहू के एपीसोड उन्हें बेहद पसंद थे। इसलिए उन्हें कुछ ज्यादा परेशानी होने लगी थी। राकेश जी ने उन्हें समझाया कि यह संकट ज्यादा नहीं चलेगा। अस्सी कनेक्शन एक साथ कटे हैं, केबल वाला सिर के बल दौड़ा चला आएगा।

केबल वाला आया लेकिन सिर के बल चलकर नहीं, बल्कि सिर अकड़ाकर 'वैगन आर' में बैठकर। दो बंदूकधारी उसके अगल–बगल थे। उसने कॉलोनी के मंदिर पर सबसे मिलने की इच्छा व्यक्त की। उसे देखकर राकेश जी को लगा कि यह चेहरा परिचित–सा है। कहां देखा है, यह समझ में नहीं आया। बाद में उन्हें याद आया कि उसका चेहरा कुछ–कुछ प्रेसिडेंट बुश से मिलता है।

केबल मालिक ने साफ–साफ कहा कि वह ढाई सौ रुपये से एक पैसा कम नहीं करेगा। दो–चार लोग बच गए हैं, वे भी चाहें तो कटवा लें। अवंतिका कॉलोनी वाले बहुत बड़–बड़ कर रहे थे। उन्हें भी थूककर चाटना पड़ा। जो लोग आज कटवा रहे हैं, ये ही लोग कल हमसे गिड़गिड़ाएंगे और केबल फिर से जुड़वाएंगे। कॉलोनी वालों को सांप सूंघ गया था जैसे। फिर भी वे इस निश्चय के साथ घर लौटे थे कि ढाई सौ रुपये में कोई केबल नहीं लगवाएगा और इस बदतमीज माफिया की शिकायत डी.एम. से की जाएगी। यही वह दुर्लभ क्षण था, जब राकेश जी को हार्दिक खुशी मिली थी।

अगले दो दिन उन्हें अपनी पत्नी से लगातार खबरें मिलती रहीं कि केबल वाले से कोई समझौता न होने पर विशेषतः महिलाएं बहुत निराश हुई थीं। पार्वती, सायना और तुलसी की तकलीफ को छोटे पर्दे पर देखकर फफक उठने वाला यह वर्ग बेचैन था कि अब न जाने कहानी किस मोड़ पर पहुंची होगी! वे दूसरे मोहल्ले की ननदों और भाभियों से फोन पर अपनी जिज्ञासाएं जैसे–तैसे शांत कर लेती थीं।

बच्चे भी खास खुश नहीं थे। उनका वश चलता तो केबल कटने ही नहीं देते। कुछ पुरुष भी केबल एडिक्ट हो गए थे खासकर रिटायर्ड लोग। एक गुप्ता जी थे–पेट्रोल पंप के मालिक। खाड़ी युद्ध के चलते पेट्रोल–डीजल के 'रेट' बराबर बदल रहे थे। इस बदलाव को जानना उनके लिए बहुत जरूरी था। समाचार तो वे राष्ट्रीय प्रसारण में सुन लेते थे, लेकिन 'आज तक' की बात ही और थी। उधर कीमत बढ़ी, इधर पर्दे पर 'फ्लैश' हुआ। इन सभी लोगों को केबल वाले के रुख से बहुत निराशा हुई थी। दो–चार लोग अफसरों से मिल आए थे और वहां से उन्हें आश्वासन तक नहीं मिला।

इधर केबल मालिक भी चुप नहीं बैठा था। उसने कॉलोनी के दो–एक पदाधिकारी 'फ्री' के नाम पर और तोड़ लिए थे। वे सब परोक्ष रूप में उसकी वकालत करने लगे थे। उन्होंने समझौते का एक फार्मूला भी खोज निकाला था। जो लोग छह महीने का एडवांस देने को तैयार हों, उन्हें दो सौ रुपये मासिक पर केबल सुविधा दी जाएगी। सबसे पहले ठाकुर साहब ने इस सुविधा का लाभ उठाया। वह संपन्न ठेकेदार थे। बच्चे ऊंची पोस्ट पर थे, कहीं बाहर थे। घर में ठकुरानी अकेली रह जाती थीं। केबल पर 'मनपसंद' देखकर ही वह एकांत दुपहरी को काटती थीं। केबल कटने के बाद से उनके सिर में दर्द रहने लगा था। इसलिए उनके घर में केबल की वापसी सबसे पहले हुई। दूसरे दिन शर्मा जी टूट गए थे। उन्हें लगा, केबल न रहने से बेटा बिगड़ने लगा है। केबल था तो घर में रिमोट से खेलता रहता था। 'डिस्कवरी चैनल' का शौकीन था, कभी–कभी फैशन वाले चैनल का भी लाभ उठाता था। अब शाम को घर से गायब रहने लगा तो चिंता स्वाभाविक थी। अपने भविष्य को बचाने के लिए वह एक दिन केबल वाले के दरवाजे पर खड़े दिखाई दिए। मिडिल क्लास के कुछ मास्टरनुमा और क्लर्कनुमा लोग अभी

डटे हुए थे लेकिन उनका प्रतिरोध कमजोर पड़ता जा रहा था।

राकेश जी खुद रिटायर्ड सरकारी कर्मचारी थे। उन्हें केबल न होने का खुद तो कोई खास नहीं था। हां, यह जरूर था कि वह इराक पर अमेरिकी बढ़त के ताजे और रोमांचक कवरेज से कुछ वंचित हो रहे थे। उन्हें सद्दाम हुसैन से कोई खास सहानुभूति नहीं थी, लेकिन वह खुश थे कि वह अमेरिकी दादागिरी को थोड़ी–बहुत टक्कर तो दे ही रहा था। दूरदर्शन पर प्रसारित खबरों को सुनकर और देखकर वह समझ गए थे कि बगदाद का पतन निश्चित है।

इधर राकेश जी की पत्नी बराबर समाचार दे रही थीं कि आज फलां के यहां केबल लग गया, आज वहां लगने वाला है। राकेश जी अपने पड़ोसी चौधरी साहब के साथ इस निश्चय पर दृढ़ थे कि गुंडागर्दी के आगे नहीं झुकेंगे। उन्होंने अखबारों में दो–एक वक्तव्य छपवा दिए थे। शहर के कुछ महिला संगठन डी.एम. से कई बार मिल आए तो उन्हें लगा कि शायद केबल वाले पर दबाव पड़ेगा। लेकिन चौधरी साहब से पता चला कि सभी राजनेता, अफसर, पुलिस वाले केबल वाले की 'फ्री' वाली लिस्ट में हैं। फिर वे क्यों तो दबाव डालें, क्यों उस पर अंकुश लगाएं।

राकेश जी को उस समय जोर का धक्का लगा, जब चौधरी साहब के यहां केबल जुड़ गया। चौधरी साहब ने बहुत आंख बचाते हुए सफाई दी कि क्या करें, लड़के का साला पुलिस में है; वह 'फ्री' में जुड़वा गया है। राकेश जी समझ गए कि अब उनके घुटने टेकने का क्षण आ गया है। पत्नी लगातार समझा रही थीं कि तुम्हीं अनोखे हो क्या!

'पूरे शहर में दाम बड़ा दिए हैं नासपीटों ने। सब मजबूर होकर दे रहे हैं। तुम भी...'

वे समझ चुके थे कि इस समस्या का कोई सम्मानजनक समाधान नहीं है। उन्हें अपने हथियार डालने ही पड़ेंगे। उन्होंने फैसला कर लिया कि कल वे भी केबल वाली बिरादरी में शामिल हो जाएंगे। लेकिन उनके मन में यह सवाल बराबर उठता रहा कि ये कैसी डेमोक्रेसी है जिसमें आप दूसरे की शर्तों पर जीने के लिए मजबूर हैं। कोई संस्था, कोई कानून, कोई अधिकारी आपकी मदद के लिए सामने नहीं आता। ऐसा क्यों...!

उसी दिन पुराने मोहल्ले कैलाशपुरी का एक परिचित युवक किसी काम से आया तो बातचीत का रुख 'केबल' की ओर मुड़ गया था। उन्होंने यूं ही पूछ लिया कि तुम्हारे यहां भी दो सौ रुपये महीना तो कर ही दिया होगा?

'कर तो दिया था अंकल, लेकिन मोहल्ले वालों ने दिया नहीं।' उसने जवाब दिया था।

'तो क्या सबने केबल कटवा दिया था।'

'नहीं कटवाया भी नहीं। साले को तंग करके रख दिया। दूसरे मोहल्लों को वहीं से केबल गई है। रोज रात में कट जाती थी। उसके गुंडे आंख दिखाने आए तो पूरा मोहल्ला पिल पड़ा। कुछ को पुलिस के हवाले भी कर दिया। आठ–दस दिन में अक्ल ठिकाने पर आ गई। पहले पिचहत्तर देते थे, अब सवा सौ पर राजीनामा हो गया है। मोहल्ले के दो– चार लोग हमारे साथ नहीं थे, उनकी केबल हफ्ते–पंद्रह दिन में कट जाती है और वे...

वह हंस–हंसकर और न जाने क्या–क्या बता रहा था, लेकिन उन्होंने सुना नहीं। वह तो अपने आप में गुम हो गए थे और सोचने लगे थे कि ऐसा ही कुछ विरोध या प्रतिरोध इस कॉलोनी ने भी किया होता तो...! ❑

डी–131, रमेश विहार,
अलीगढ़–1

लघुकथा

सीख

ट्रेन तीन घंटे लेट थी। दो घंटे से प्लेटफार्म पर बैठे–बैठे वे परेशान हो रहे थे। अभी एक घंटे और परेशानी में खीझते हुए गुजारना था।

"सर! बूट पॉलिश कर दूं।" बूट पॉलिश करने वाले एक लड़के ने पास आकर पूछा।

'नहीं' उन्होंने तुरंत बेरुखी से कहा।

"जूते गंदे हो गए हैं, बढ़िया से चमका दूंगा। सिर्फ दो रुपये ही देना, सर।" उसने फिर कहा। उसके स्वर में याचना थी।

'मैंने कहा न नहीं?' खीझते हुए वह बोले।

"प्लीज सर!" उस लड़के ने अपनी याचना दुहराई।

अब वह क्रोधित हो चुके थे।

आंखें तरेरकर बोले – "स्साले! जाता है या ..."

लड़का भाग गया। उसके पास उनका सात वर्ष का बेटा भी बैठा था। उसे कुछ अजीब लगा। कुछ प्रश्न उसके मन–मस्तिष्क में घुमड़ने लगे। परंतु, अपने पिता के क्रोध को देखते हुए वह चुप रहा।

थोड़ी देर बाद वह सामान्य होकर अपने पुत्र से बात करने लगे तो उसने तुरंत अपना प्रश्न जड़ दिया – "पापा, आपने उस बूट पॉलिश करने वाले लड़के का नाम कैसे जाना?"

"नाम! नहीं, मुझे तो नहीं पता उसका नाम।" उन्होंने उत्तर दिया।

"अभी तो आपने उसे 'स्साले' कहकर पुकारा था न!" लड़के ने जिज्ञासा प्रकट की।

क्या उत्तर देते वह उस छोटे से बच्चे को! कुछ सोचकर बोले – "मैंने गुस्से में उसे 'स्साले' कह दिया। इसका मतलब मूर्ख होता है।" किसी तरह उन्होंने टालने के ख्याल से बात बनाई।

... उन्हीं का घर है। उनका वही पुत्र अपने छोटे भाई के साथ खेल रहा है... रह–रहकर छोटा बड़े का खिलौना छीन लेता है। बड़े को गुस्सा आ गया। उसने छोटे को डांटते हुए कहा– "स्साले। क्यों मेरा दिमाग खा रहे हो। भागते हो कि नहीं, स्साले।"

उसके पापा ने जब यह सुना तो डांटने की सोची। इसके पहले ही उसकी मम्मी ने आकर उसे एक चपत लगा दी और पूछा – "क्यूं रे, यह गाली कहां से सीखी?"

"गाली, मैंने कहां बोली!" रोते हुए उसने कहा।

"तूने अभी छोटे को 'स्साला' नहीं कहा। मम्मी ने एक थप्पड़ और रसीद करते हुए पूछा।"

अब वह और रोते हुए बोला – "साला कोई गाली थोड़े ही है। इसका मतलब तो मूर्ख होता है पापा ने बताया था।"

उसकी मम्मी उसके पापा को देखने लगी। पापा ने अपना सिर झुका लिया। ❑

दिवेश कुमार शर्मा
ग्राम+पो.–बघडा, जिला समस्तीपुर
(बिहार)–848506

चार कविताएं

●

डा. राजेंद्र कुमार कनौजिया

दरअसल

कुछ लड़कियां
खेलती थीं, फूलों में
तितलियों की तरह
जाने क्या ढूंढती थीं
और जाने क्या
पा जाती थीं

कुछ लड़कियां
बहती थीं
पहाड़ी नदियों की तरह
समेटे रास्ते के
छोटे–बड़े, पत्थर–तिनके
अपने साथ

कुछ लड़कियां,
होती थीं,
अंधेरी रात का
सांवला–सा चांद
अपने माथे पर
पीली बिंदी लगाए

कुछ लड़कियां
कुछ भी नहीं होती थीं
न फूल, न तितली
न नदी, न चांद
फूंकती थीं, चूल्हे में
अपने जिस्म की भांप,
चढ़ती–उतरती थीं सीढ़ियां
पार करती थीं पुल
नदी के एक किनारे से
दूसरे किनारे तक
सोख लेती थीं, सूरज का ताप
लपेट लेती थीं,
चांद की नर्म लिहाफ,
चलती थीं तेज,
हवाओं के विपरीत
अपने कंधों पर
अपना तना हुआ सर
शान से उठाए
कर देती थीं
रास्तों को छोटा,
थका देती थीं
कम्प्यूटर का दिमाग
निकल आती थीं
हर चक्रव्यूह से भी
लोग कहते हैं
पता नहीं क्यों
कुछ लड़कियां
बिलकुल खामोश
रहा करती थीं!

चित्र–पट

बया ने बनाए घोंसले,
पेड़ से तिनके
कम हो गए,

घोंसले से बाहर झांका
एक नन्हा–सा चूजा
बया ने डाले दाने
उसके खुले मुंह में
मंदिर में भोग चढ़ा
भगवान को,

झाड़ू ने बुहारा आंगन
तुलसी पर जला 'दीया',
साहूकार ने बंद कर ली
अनाज की कोठरी
बिक गया सरकारी चावल,
पिछले दरवाजे से
उड़ गए बच्चे
मां ने समेटकर
रख दिए दाने, तिनके
पता नहीं कब
वापस आ जाएं बच्चे
आखिर उनके सर पर
छप्पर और पेट में
दाल–भात भी तो चाहिए!

मां की सीख

मां कहती थी,
दर्द बांटना,
सबके आंसू पी लेना,
सुख–दुख, घर के दो कमरे हैं
जिसमें चाहे जी लेना,
दुआ ना करना,
सुख ना मांगना,
जो मिल जाए,
ले लेना।
बचपन में भूखा होता था,
तब कहती थी सब्र करो
लिखने को कोयला देती थी
खड़िया यूं मत घिसा करो।
चंदा ने भी तो मांगे थे,
अपनी अम्मा से कपड़े,
मैं कहता, तो कह देती थी
भैया के ले लिया करो
भैया के कपड़ों से,
पापा के जूतों तक बड़ा हुआ
पूरी–आधी, रूखी–सूखी
खा–पी तनकर खड़ा हुआ,
जब सर पर सूरज आया
और पैरों में आए पत्थर
मां कहती, आगे बढ़ता चल
बेटा थोड़ी हिम्मत कर
मेरी मां बिल्कुल सच्ची है
सच ही बोला करती है
पर बेचारी सच क्या जाने
वो तो घर में रहती है।
दर्द नहीं पकते चूल्हे में,
चूल्हे में पकती है आस
शाम ढले लौटा करते हैं
मां के बिखरे से विश्वास
वो क्या जाने कैसे सुनकर
आया होगा सबसे ना
वो क्या जाने किस मजबूरी में
करनी पड़ती है हां
हां–ना, लेना–देना, पाना–खोना
सब बेमाने हैं
मेरा बेटा सबसे अच्छा है
बस, मां ये ही जाने है
अब कैसे समझाऊं उसको
कितने दर्द सहेगा दिल,
कैसे सबके आंसू पी ले
सबके गम पीना मुश्किल
पर लगता है, सब समझे है
मुझको नहीं बताती है
आंचल में गांठें दे–देकर
हिम्मत मुझे बंधाती है
अक्सर जब रातों को मुझको
नींद नहीं आया करती
नहीं सुनाती मुझको लोरी
खुद थककर सो जाती है!

49/14, बैंग्लो रोड,
कमलानगर
दिल्ली–7

विकलांगों के लिए स्वरोजगार की एक आसान आकर्षक योजना

☞ कृष्ण कल्कि

अब विकलांगजनों को भी निराश होने की जरूरत नहीं! सामान्य लोगों की तरह ही वे भी अब अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं और अपना खुद का रोजगार शुरू करके अपने लिए एक नियमित आय सुनिश्चित कर सकते हैं – चाहे वे कितने भी अधिक विकलांग क्यों न हों अथवा कितने भी दूरदराज के गांवों में क्यों न रहते हों। इन विकलांग जनों के पास पहले से किसी कामधंधे का अनुभव हो या न हो, वे अच्छे खासे पढ़े–लिखे हों या कम शिक्षित हों अथवा निपट अनपढ़ हों, अपने खुद के कामधंधे लायक उनके पास पूंजी हो या न हो – इससे कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि उन्हें मदद प्रदान करने संबंधी योजना का स्वरूप ही कुछ ऐसा है कि उनकी अल्पशिक्षा और अनुभवहीनता उसमें आड़े नहीं आती। कामधंधे भी इतनी तरह के हैं कि किसी न किसी के लिए तो हर विकलांग व्यक्ति उपयुक्त ठहरेगा ही। उसे चाहिए तो बस अपने मन में एक संकल्प कि उसे भी कुछ करना है, अपने पैरों पर खड़ा होना है, कोई स्वरोजगार शुरू करना है। इस अदद संकल्प से जो राह निकलती है वह तमाम मुश्किलें आसान कर देती है। पूंजी की समस्या भी कोई खास आड़े नहीं आती क्योंकि 'राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम' सहायता के लिए तत्पर है जो अधिकतर मामलों में तो परियोजना की लागत का शत–प्रतिशत, जबकि कुछेक मामलों मे 90 प्रतिशत तक धन उपलब्ध कराता है।

बस, फिर देर किस बात की? चाहे आप स्वयं शारीरिक या मानसिक रूप से विकलांग हों अथवा आपका कोई पड़ोसी या संबंधी ऐसी विकलांगता से ग्रस्त हो, स्वरोजगार के अवसर सबके लिए दस्तक दे रहे हैं। शारीरिक विकलांगता की स्थिति में विकलांग व्यक्ति स्वयं, जबकि मानसिक विकलांगता की हालत में जिन पर ऐसा विकलांग व्यक्ति आश्रित हो (यानी उसके माता–पिता अथवा पति, पत्नी) वे स्वरोजगार के इन अवसरों का लाभ उठा सकने के लिए पात्र हैं। राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम की इस स्वरोजगार योजना से लाभ उठाने के लिए कब–कब, कैसे–कैसे, क्या–क्या करना होगा, इस बारे में प्रस्तुत है पूरी जानकारी –

सबसे पहले तो विकलांगता की दशा तय करनी होगी। विकलांगता दो तरह की होती है – व्यक्ति शारीरिक रूप से विकलांग होता है या मानसिक रूप से। अंधत्व बधिरता, मूकत्व, लंगड़ापन, लूलापन, हाथ या पैर का जन्मजात या दुर्घटनावश कटा होना आदि शारीरिक विकलांगता के अंतर्गत आते हैं। मानसिक स्तर के विभिन्न रोगी, मंदबुद्धि लोग, प्रमस्तिष्कीय जन, पक्षाघात से पीड़ित, आत्मविमोह से ग्रस्त व्यक्ति मानसिक विकलांगों की श्रेणी में आते हैं। शारीरिक रूप से विकलांग जन तो अन्य सरकारी–गैर–सरकारी योजनाओं के जरिए भी ऋण प्राप्त कर स्वरोजगार शुरू कर सकते हैं किंतु मानसिक विकलांगों के मामले में ऐसा नहीं है। वे वैधानिक संविदा के अंतर्गत ऋण प्राप्त करने में असमर्थ हैं। उनके लिए 'राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम' की स्वरोजगार योजना ही कारगर है।

व्यक्ति चाहे शारीरिक रूप से विकलांग हो या मानसिक रूप से, उसके पास उसकी विकलांगता से संबंधित प्रमाणपत्र अमूमन रहता ही है। ऐसा प्रमाणपत्र इस स्वरोजगार योजना के लिए जरूरी है जो प्रमाणित करता हो कि व्यक्ति विकलांग है और किस हद तक। यदि प्रमाणपत्र न हो तो पहले यह प्रमाणपत्र प्राप्त करना चाहिए। ऐसा प्रमाणपत्र किसी भी जिला चिकित्सालय से यथोचित जांच के पश्चात आसानी से मिल जाता है। यह व्यवस्था निःशुल्क है। जिला चिकित्सालयों के अलावा भी कई क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रीय अस्पतालों, सामुदायिक चिकित्सा केंद्रों आदि को भी इस बारे में अधिकृत किया गया है कि वे क्षेत्रीय जनों को जांचोपरांत विकलांग पाए जाने पर विकलांगता संबंधी, प्रमाणपत्र जारी करें। इस प्रमाणपत्र में यही भी लिखा होता है कि व्यक्ति किस हद तक विकलांग है। इस स्वरोजगार योजना का लाभ उठाने के लिए व्यक्ति को 40 प्रतिशत से अधिक विकलांग होना जरूरी है, इसलिए विकलांग व्यक्ति को अपने प्रमाणपत्र के आधार पर सुनिश्चित हो लेना चाहिए कि उसकी विकलांगता कम से कम 40 प्रतिशत है या नहीं।

इसी क्रम में आवेदक विकलांग व्यक्ति को यह भी सुनिश्चित कर लेना होगा कि उसके पास ऐसे दस्तावेज उपलब्ध हों जो उसे भारतीय नागरिक सिद्ध कर सकें। इसके लिए मतदान परिचयपत्र उपयुक्त है। जिन क्षेत्रों में मतदान परिचयपत्र न बने हों, वहां के आवेदक विकलांग व्यक्ति अन्य उपर्युक्त दस्तावेजों का उपयोग कर सकते हैं अथवा मतदान सूची में अपने नामोल्लेख की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत कर सकते हैं। इनके भी अभाव में विधिवत अधिप्रमाणित शपथपत्र (हलफनामा) तैयार कराना होगा जो किसी भी वकील की सहायता से किसी जिले की कचहरी या परगनाधिकारी के कार्यालय, परिसर में अमूमन बैठने वाले शपथआयुक्त (ओथ कमिश्नर) से प्राप्त किया जा सकता

है। इसके लिए शपथकर्ता को शपथ आयुक्त के समक्ष स्वयं उपस्थित होकर हस्ताक्षर करना आवश्यक है, क्योंकि पिछले दिनों ऐसे कई मामले प्रकाश में आए हैं जब शपथकर्ता ने शपथ आयुक्त के समक्ष हस्ताक्षर नहीं किए थे और ऐन मौके पर उनके प्रमाणपत्र अवैध करार दे दिए गए।

आवेदक विकलांग व्यक्ति को यह भी सुनिश्चित कर लेना होगा कि राष्ट्रीय विकलांग वित्त विकास निगम की स्वरोजगार योजना के लिए आवेदक करते वक्त उसकी आयु न्यूनतम 18 वर्ष तथा अधिकतम 55 वर्ष हो। इसको प्रमाणित करने के लिए सबसे उपर्युक्त दस्तावेज है आवेदक विकलांग व्यक्ति के मैट्रिक (हाई स्कूल) उत्तीर्ण होने का प्रमाणपत्र। इसके अभाव में अन्य दस्तावेजों का उपयोग किया जा सकता है और उनके भी अभाव में विधिवत अधिप्रमाणित शपथपत्र का सहारा लेना होगा।

इसके साथ ही आवेदक विकलांग व्यक्ति को अपनी वार्षिक आय के बारे में भी प्रमाणपत्र प्राप्त करना पड़ेगा। इस आशय का प्रमाणपत्र परगनाधिकारी जैसे प्राधिकृत सरकारी अधिकारियों से मिलता है जिसके लिए आवेदक के ग्राम प्रधान आदि की संस्तुतियों की दरकार होती है। 'राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम' की स्वरोजगार योजना के तहत ऋण प्राप्त करने वाले आवेदक विकलांग व्यक्ति की वार्षिक आय, यदि वह शहरी क्षेत्र का निवासी हो तो 55 हजार रुपये तथा वह ग्रामीण क्षेत्र का निवासी हो तो 60 हजार रुपये से अधिक नहीं होनी चाहिए। वार्षिक आय की यह स्थिति आवेदक के आय प्रमाणपत्र से स्पष्टतया प्रकट होनी चाहिए।

आय प्रमाणपत्र जैसा ही एक और प्रमाणपत्र आवेदक को प्राप्त करना होगा, और वह है निवास प्रमाणपत्र। अपनी जिस योजना या कामधंधे का आवेदक जिस राज्य में संचालित करना चाहता हो अथवा जिस राज्य का वह रहनेवाला है, वह दरअसल उसी राज्य का निवासी है – यह बात निवास प्रमाणपत्र से प्रमाणित होनी चाहिए। इस प्रमाणपत्र को प्राप्त करने की प्रक्रिया भी वही है जो आय प्रमाणपत्र के लिए बताई गई है।

अब आती है बारी उस कामधंधे के चुनाव की, जिसको कार्यान्वित करने के लिए आवेदक को ऋण हेतु आवेदन करना है। कामधंधे को ऐसा होना चाहिए जिसके कार्यान्वयन में अधिक से अधिक ढाई लाख रुपये की लागत बैठती हो, क्योंकि इस योजना के तहत 'राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम' द्वारा प्रदत्त ऋण की अधिकतम सीमा ढाई लाख रुपये ही है। साथ ही इस मामले में यह भी दृष्टिगत रखना होगा कि यदि इस योजना के तहत आवेदन शारीरिक रूप से किसी विकलांग व्यक्ति द्वारा किया जा रहा हो तो उस कामधंधे, परियोजना अथवा गतिविधि (जिसके लिए ऋण मांगा जा रहा हो) का संचालन उसे स्वयं करना होगा और उसे उस कार्य में नियमतः कम से कम 15 प्रतिशत व्यक्तियों को रोजगार देना होगा। यदि ऋण मानसिक रूप से विकलांग व्यक्ति द्वारा अथवा उसके लिए उसके पाल्य माता–पिता या पति/पत्नी की ओर से मांगा जा रहा हो तो यह सुनिश्चित करना होगा कि योजना इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमें वह मानसिक विकलांग व्यक्ति भी योजना का अंग हो या योजना का लाभ उसे मिले। इस योजना के लिए कामधंधे का चुनाव इन सब बातों को दृष्टिगत रखकर ही किया जाना चाहिए। साथ ही यह भी सुनिश्चित कर लिया जाना चाहिए कि आवेदक ने किसी अन्य काम के लिए किसी अन्य योजना के अंतर्गत अथवा किसी बैंक या वित्तीय संस्थान से पहले से कोई ऋण न ले रखा हो।

कामधंधे की योजना का कार्यान्वयन भी कामधंधे का चुनाव करने के क्रम में ही इस लिहाज से सुनिश्चित कर लिया जाना चाहिए कि ऋण की पूरी रकम नियमानुसार सात वर्षों की अधिकतम अवधि में चुका ही दी जानी है। ऋण की वापसी आवेदक की सुविधा अनुसार मासिक, त्रैमासिक अथवा अर्धवार्षिक किश्तों में होगी। इसलिए कामधंधे का चुनाव इसी लिहाज से किया जाना चाहिए कि उसके कार्यान्वयन के दौरान आमदनी का ऐसा प्रवाह बना रहे जिससे कि चुनी गई किश्तों के अनुसार अदायगी नियमित रूप से बनी रहे। समय से पहले और पूर्ण अदायगी पर ब्याज में 0.5 प्रतिशत की रियायत का भी प्रावधान है इसलिए कामधंधे का चुनाव भी इसी लिहाज से किया जाना चाहिए कि उसके कार्यान्वयन के दौरान इस रियायत को प्राप्त कर पाना संभव हो पाए। आवेदक यदि महिला है तो उसे कुल ब्याज पर 2 प्रतिशत की अतिरिक्त रियायत भी मिलेगी।

कामधंधे का चुनाव करने के दौरान ही उस समीकरण को भी मद्देनजर रखना और भली–भांति समझ लेना चाहिए जो प्रस्तावित परियोजना के मामले में प्रवर्तक (आवेदक) के अंशदान और ब्याज दर को सुनिश्चित करता है क्योंकि कुछेक परियोजनाओं में राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम शत–प्रतिशत ऋण देता है जबकि कुछेक में 90 प्रतिशत तक, जो दरअसल परियोजना की लागत पर निर्भर करता है। स्वरोजगार की इस ऋण योजना के कार्यान्वयन के लिए निगम ने विभिन्न राज्यों में अनेक संबंधित एजेंसियों को भी प्राधिकृत कर रखा है। लागत पर निर्भर करते हुए अनेक परियोजनाओं में ऐसी संबद्ध एजेंसियों का भी हिस्सा तय किया गया है। परियोजना की लागत यदि 50 हजार रुपये से कम होगी, तो इसके लिए निगम द्वारा आवेदक को शत–प्रतिशत ऋण प्रदान किया जाएगा और संबद्ध एजेंसी या स्वयं आवेदक को कुछ भी अंशदान नहीं करना होगा तथा ऐसी परियोजना के लिए प्राप्त ऋण पर 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज देना होगा। परियोजना की लागत यदि 50 हजार रुपये से अधिक किंतु एक लाख रुपये से कम होगी, तो इसके लिए आवेदक को जो ऋण दिया जाएगा उसका 95 प्रतिशत हिस्सा तो निगम देगा जबकि संबद्ध एजेंसी का हिस्सा होगा 5 प्रतिशत और स्वयं आवेदक को अपनी ओर से कुछ नहीं लगाना होगा तथा ऐसी परियोजना के लिए प्राप्त ऋण पर आवेदक को प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज देना होगा। परियोजना की लागत यदि एक लाख रुपये से अधिक किंतु ढाई लाख रुपये से कम होगी, तो इसके लिए आवदेक को दिए जाने वाले ऋण का 90 प्रतिशत हिस्सा तो निगम देगा जबकि शेष 10 प्रतिशत में से संबद्ध एजेंसी और आवेदक दोनों के हिस्से 5–5 प्रतिशत होंगे तथा ऐसी परियोजना के

लिए प्राप्त ऋण पर आवदेक को 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज देना होगा। लिहाजा, इस स्व–रोजगार योजना के तहत ऋण के लिए आवेदन के क्रम में कामधंधे का चुनाव परियोजना यानी कामधंधे या व्यावसायिक गतिविधि की लागत को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए क्योंकि स्वयं आवदेक के अंशदान से लेकर उसके द्वारा देय ब्याज की वार्षिक दर तक का निर्धारण उसी पर होना है। ऋण बहरहाल ऋण ही होता है इसलिए जानकर अक्सर यही सलाह देते हैं कि इस मामले में जोखिम कम से कम उठाया जाना चाहिए।

परियोजना की लागत; उसमें अपना खुद का हिस्सा, परियोजना के संचालन की सुविधा, उससे हो सकने वाली आय की स्थिति; उसकी नियमितता व प्रवाह; लिए जाने वाले ऋण पर ब्याज दर; ऋण की अदायगी की किश्त–संबंधी अवधि और उसके प्रवाह आदि पर अच्छी तरह सोच विचार करने के बाद ही किसी कामधंधे का चुनाव करना चाहिए।

जिस कामधंधे के संचालन के संबंध में आवेदक का कोई पूर्व अनुभव हो अथवा जिसके लिए उसने कोई शैक्षिक, तकनीकी या व्यावसायिक योग्यता हासिल की हो, उसका चुनाव आवेदक विकलांग व्यक्ति को प्राथमिकता के आधार पर करना चाहिए क्योंकि ऐसे कामधंधे के सुचारू संचालन में निश्चित ही सुविधा रहती है। फिर, यदि आवेदक उस कामधंधे के संचालन के संबंध में हासिल अपनी किसी शैक्षिक/तकनीकी/व्यावसायिक योग्यता और अनुभव का उल्लेख करता है अथवा इस पक्ष में कोई अधिमान्य प्रमाणपत्र प्रस्तुत करता है, तो उसे ऋण प्राप्त होने में आसानी हो जाती है। आवेदक यदि शारीरिक रूप से स्वयं विकलांग हो तो ऐसे प्रमाणपत्र उसके स्वयं के पक्ष में होने चाहिए और यदि आवेदन किसी मानसिक विकलांग के लिए किया जा रहा हो तो ऐसे प्रमाणपत्र उसके पाल्य या उस माता–पिता या पति/पत्नी के पक्ष में होने चाहिए जो उस मानसिक विकलांग के लिए उस काम धंधे का प्रमुखतापूर्वक संचालन करेंगे।

इस योजना के लिए चुने जा सकने लायक काम धंधों का दायरा बहुत व्यापक है। छोटे स्तर पर संचालित किया जा सकने वाला कोई भी काम धंधा इस योजना के तहत चुना जा सकता है।

ऐसे कामधंधों की संख्या सौ से भी अधिक है, जिनमें से प्रमुख हैं– एस.टी.डी./आई. एस.डी. टेलीफोन बूथ, फोटो स्टूडियो, वीडियोग्राफी, ट्रेवल एजेंसी, वस्त्र, धुलाई, जनरल स्टोर, नमक पैकिंग, चाय पत्ती की पैकिंग, चाय की दुकान, ढाबा, साइकिल, रिक्शा–मरम्मत, कला–फलक, लाउडस्पीकरों की किराएदारी, कृषि सेवा की किराएदारी, आटोमोबाइल वर्कशॉप, पंपिंग सेट मरम्मत, नलसाजी, हेयरकटिंग सैलून, ब्यूटी पार्लर, बुटीक, बढ़ईगिरी, तैयार फर्नीचरों की बिक्री, लौहारी, कागज पिन, स्टोव पिन, केंचुआ पालन, रेशम कीड़ा–पालन, सजावटी बल्ब, छाता मरम्मत, छाता असेंबलिंग, हस्तनिर्मित बर्तन, रेडियो मरम्मत, टेपरिकार्डर मरम्मत, वी.सी. आर. व टी.वी. मरम्मत, लकड़ी पर नक्काशी, टीन कार्य, बरदाना, खाली कनस्तरों की बिक्री, कबाड़ बिक्री व खरीदी, पान–सिगरेट की दुकान, ग्रामीण यातायात साधनों की मरम्मत, संगीत–साजों की मरम्मत, चर्मोद्योग, मोचीगिरी, कुटीर स्तर पर साबुन उत्पादन, हाथीदांत संबंधी कारोबार, मोमबत्ती निर्माण, चोक व स्टार्टर निर्माण, कपूर पैकिंग, प्लास्टिक वस्तुओं की पैकिंग, कुटीर स्तर पर प्लास्टिक के सामानों का निर्माण, प्रिंटिंग प्रेस, कुटीर स्तर पर पेन का निर्माण, स्याही का निर्माण, बिंदियों का निर्माण व पैकिंग, मेंहदी पाउडर निर्माण व पैकिंग, मेहंदी पेस्ट निर्माण व पैकिंग इत्र उत्पादन व पैकिंग, केश तेल उत्पादन व पैकिंग, कुटीर स्तर पर शैंपू उत्पादन व पैकिंग, डिटर्जेंट पैकिंग, टेलरिंग, कशीदाकारी, स्टोव बत्ती, गोला–लच्छी, छींटकारी, फुलकारी, जरदोजी, साड़ी बुनाई, हथकरघा वस्त्र, होजरी वस्त्र, खिलौना–गुड़िया, चिकित्सकीय पट्टी, पतंगसाजी, मंझा निर्माण, मसाला पिसाई, आटा चक्की, मैदा उत्पादन, गजक–पट्टी उत्पादन, नमकीन उत्पादन, दलिया, गुड़ उत्पादन, मिठाई उत्पादन, जूस की दुकान, मधुमक्खी पालन, पशु चारा, दुग्ध उत्पादन, पत्ता दोना निर्माण, कागज दोना निर्माण, काजू प्रशोधन, अचार–मुरब्बा–जैम उत्पादन, पापड़ उत्पादन, बड़ी उत्पादन, मखाना प्रशोधन, मक्का प्रशोधन, घानी तेल, मेंथाल, जूट उत्पाद, बैग–पर्स–निर्माण, हस्तनिर्मित कागज, फोटो फ्रेमिंग, कत्था, खसटट्टी, सींक या सरकंडों की चिकों का निर्माण, बांस आदि की टोकरियों व पंखों का निर्माण, दाना भूनने की भट्टी का संचालन, गोंद–रेजिन, जिल्दसाजी, दियासलाई निर्माण, लाख, वनोत्पाद संग्रह, बीड़ी बनाना, माला निर्माण, फूल विक्रय, रत्न कटाई, कुम्हारी, चूना उत्पाद, बर्तन पाउडर का उत्पादन व पैकिंग, लकड़ी कोयले की बिक्री, उपलों की बिक्री, पत्थर कोयले की बिक्री, कोयले की टिकियों का उत्पादन व बिक्री, गुलाल उत्पादन व बिक्री, चूड़ियों की बिक्री, चीनी मिट्टी की वस्तुओं का उत्पादन व बिक्री, स्लेट–निर्माण, निवाड़ बुनाई, सीमेंट की जालियों का निर्माण, रंगसाजी, सिलाई मशीन मरम्मत, नेल पॉलिश उत्पादन, लिपिस्टिक उत्पादन, टेलकम पाउडर उत्पादन, खिजाब उत्पादन, शेविंग क्रीम व साबुन उत्पादन, बालसफा साबुन व क्रीम का उत्पादन, दंत मंजन उत्पादन, मालिश तेल उत्पादन, स्क्रीन प्रिंटिंग, बूट पॉलिश उत्पादन, फिनायल उत्पादन, बेकरी, अगरबत्ती निर्माण, रबड़ की मोहरों का निर्माण, चाकबत्ती उत्पादन, पेस्टल कलर व क्रेयानों का उत्पादन, आईनासाजी, ब्लॉक मेकिंग, पेपरमैशे के खिलौनों का उत्पादन, प्लास्टर कास्टिंग, हबन सामग्री की पैकिंग, घड़ीसाजी, ठप्पा छपाई, पारचाजात, पेंटरी, पशुपालन, आलू चिप्स का उत्पादन, स्वेटर बुनाई, कालीन बुनाई, शॉल बुनाई आदि। इन काम धंधों के अतिरिक्त भी यदि आवेदक चाहे तो अपनी रुचि, योग्यता, अनुभव तथा स्थानीय मांग व जरूरत के मुताबिक किसी अन्य काम धंधे को इस योजना के तहत ऋण के लिए आवेदन हेतु चुन सकता है।

किसी कामधंधे में यदि किसी विशेष तरह की मशीन की आवश्यकता हो तो उसके लिए आवेदक के पास कम से कम तीन आपूर्तिकर्ताओं की निविदा होनी चाहिए, जिनमें से सबसे कम दर उद्धृत करने वाले आपूर्तिकर्ता को आपूर्ति के लिए वांछित माना जाएगा। ऐसा ही तब भी किया जाना चाहिए जब आवेदक को अपने चयनित काम धंधे के लिए किसी खास कच्चे माल की दरकार हो।

चयनित काम धंधे का संचालन चरणबद्ध रूप से किस प्रकार किया जाएगा, इसका विस्तृत खाका भी आवेदक के पास होना चाहिए। खाका ऐसा हो कि उसे देखते ही पूरी परियोजना का क्रमिक संचालन स्पष्ट हो सके। साथ ही, इसका भी स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए कि उस काम धंधे में शारीरिक रूप से विकलांग व्यक्ति कम से कम 15 प्रतिशत व्यक्तियों को किस तरह रोजगार दे पाएगा अथवा वह काम धंधा यदि किसी मानसिक विकलांग के लिए किया जा रहा हो तो उसका पाल्य उसे उस काम धंधे से अभिन्न रूप से किस तरह जोड़े रखते हुए लाभ दे पाएगा। प्रस्तुत योजना के तहत ऋण के लिए आवेदन के दौरान इन सब तथ्यों के उल्लेख की जरूरत पड़ेगी।

अब आती है बारी आवेदन करने की। प्रस्तुत योजना के तहत दिए जाने वाले ऋण की प्राप्ति के लिए आवेदन स्वयं आवेदक द्वारा (यदि वह शारीरिक रूप से विकलांग है तो, अन्यथा उसके मानसिक विकलांग होने की स्थिति में उस व्यक्ति द्वारा जिस पर वह आश्रित है) किया जाता है। आवेदन सादे कागज पर नहीं, बल्कि एक निर्धारित प्रपत्र पर किया जाता है। यह प्रपत्र 'राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम' के कार्यालय अथवा विभिन्न राज्यों में निगम द्वारा प्राधिकृत संबद्ध एजेंसियों से प्रत्यक्ष रूप से भी प्राप्त किया जा सकता है और डाक से भी मंगाया जा सकता है। प्रपत्र को मांगी गई सूचनाओं के अनुरूप पूरी तरह से भरकर तथा सभी वांछित कागजात की अधि प्रमाणित प्रतिलिपियों सहित उसी कार्यालय में जमा कर दिया जाना चाहिए, जिससे निर्धारित प्रपत्र मंगाया या प्राप्त किया गया हो। भली–भांति भरे हुए प्रपत्र को सीधे निगम के कार्यालय में भी भेजा जा सकता है। परियोजना की करणीयता आदि की जांच–पड़ताल करने के बाद यथोचित ऋण मंजूर कर दिया जाता है और फिर इस तरह शुरू होता है विकलांग ग्रामीणों के जीवन में भी खुशियों और आत्म–निर्भरता की शीतल बयार का बह निकलना। राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम का पता है – रेडक्रॉस भवन, सेक्टर 12 (मिनी सचिवालय के सामने), फरीदाबाद–121002। ❑

डी–54, तीसरा तल, मेन बाजार,
शकरपुर, दिल्ली–110092

त्वरित ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम

सरकार ने त्वरित ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम (एआरईपी) के अंतर्गत दसवीं योजना में 563.87 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं। एआरईपी के तहत ब्याज सब्सिडी की एक योजना है जिसमें गैर विद्युतीकृत गांवों, दलित बस्तियों और जनजातीय गांवों के विद्युतीकरण के लिए सहायता दी जाती है। इस योजना की मुख्य विशेषताओं में ऊर्जा के परंपरागत और गैर–परंपरागत स्रोतों के जरिए विद्युतीकरण के लिए एआरईपी के तहत सहायता दी जाएगी। साथ ही योजना के अंतर्गत ब्याज सब्सिडी चार प्रतिशत तय की गई है। एआरईपी के अंतर्गत ब्याज सब्सिडी ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रमों के लिए राज्य सरकारों और वित्तीय संस्थानों जैसे ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम, ऊर्जा वित्त निगम, ग्रामीण आधारभूत संरचना विकास कोष, नाबार्ड से ऋण सहायता लेने वाले ऊर्जा संस्थानों को प्राप्त होगी।

सरकार प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (पीएमजीवाई) के अंतर्गत राज्यों को वित्तीय सहायता देने के साथ ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के लिए न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (एमएनपी) के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती है। वर्ष 2002–03 के अंतर्गत ग्रामीण विद्युतीकरण के लिए पीएमजीवाई और एमएनपी के लिए क्रमशः 362 करोड़ रुपये और 600 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। ❑

अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए मैट्रिक बाद छात्रवृत्ति

अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के लिए मैट्रिक बाद छात्रवृत्ति योजना, देश में शिक्षा के लिए दी जा रही छात्रवृत्ति योजनाओं में सबसे बड़ी योजना के रूप में उभर कर सामने आई है। अप्रैल 1998 से सितंबर 2003 तक 97 लाख से अधिक विद्यार्थियों ने इस योजना से लाभ उठाया। इस वित्त वर्ष के दौरान करीब 19.26 लाख विद्यार्थी इस योजना से लाभ उठाएंगे। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने इस अवधि के लिए 825.26 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं। इस योजना के लिए दसवीं योजना के तहत 1544.40 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। इस प्रकार मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति योजना से अप्रैल 1998 से दिसंबर 2003 तक 27.16 लाख लोगों ने लाभ उठाया, जिन्हें 58.50 करोड़ रुपये की छात्रवृत्ति प्रदान की गई। इस वर्ष 5.47 लाख छात्रों को इस योजना से फायदा होने की अपेक्षा है।

अनुसूचित जाति के छात्रों को अच्छी शिक्षा मुहैया कराने के लिए मंत्रालय ने कई कदम उठाए हैं। सरकार ने डा. अंबेडकर राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना लागू की ताकि अनुसूचित जाति और जनजाति के छात्रों में प्रतिस्पर्धा की भावना जाग्रत हो। उदाहरण के लिए 10वीं कक्षा की नियमित परीक्षा में सफल 193 अनुसूचित जाति के और 90 अनुसूचित जनजाति के छात्रों को इस योजना के लागू होने से पहले वर्ष में ही 68.30 लाख रुपये की छात्रवृत्तियां प्रदान की गईं। ❑

हार्टिकल्चर के क्षेत्र में अग्रसर नगालैंड

☞ लीना

नगालैंड आधारभूत रूप से बागवानी कृषि वाला राज्य है। इसकी वजह है यहां का मौसम और यहां की जमीन की किस्म जो फल–सब्जियों, मसालों, कंद, मशरूम, सुगंधित और औषधीय पौधों कहवा, इलायची, नारियल, फूल और काजू उपजाने के लिए बेहतर है। साथ ही यहां की कृषि योग्य भूमि का 80 फीसदी पहाड़ी क्षेत्र है जिसकी ढलाव वाली जमीन बागवानी कृषि के लिए ज्यादा उपयुक्त मानी जाती है। ऐसी जमीन में अन्य कृषि क्षेत्रों की अपेक्षा प्रति हेक्टेयर पैदावार भी ज्यादा है। राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 16,579 वर्ग कि.मी. के करीब 7,225 वर्ग कि.मी. में कृषि की जाती है।

केंद्र सरकार की सहायता वाली बागवानी तकनीक विकास योजना के तहत राज्य में बागवानी के सभी क्षेत्रों में काफी तकनीकी विकास हुआ है, साथ ही उपज भी बढ़ी है। इसके अलावा केंद्र की आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजनाओं के तहत बागवानी से संबंधित कई योजनाओं की सहायता से राज्य ने इस क्षेत्र में पिछले दस वर्षों में काफी तरक्की की है।

राज्य में आज बागवानी के प्रति युवाओं में भी आकर्षण बढ़ा है। चूंकि यह एक हाईटेक कृषि है जिसमें एक व्यवस्थित योजना के साथ ही अच्छे, उच्च गुणवत्ता तथा तकनीकी श्रम की आवश्यकता होती है, ताकि अधिक से अधिक उपज पैदा की जा सके। ऐसे में बागवानी कृषि में युवाओं को मानसिक संतुष्टि तो मिलती ही है, उन्हें स्वावलंबी बनने या रोजगार उपलब्ध होने के भी अवसर अधिक मिलते हैं।

केंद्र के हार्टिकल्चर टेक्नोलॉजी मिशन के तहत नगालैंड में 117 प्रोजेक्ट की पहचान कर उसे सुविधाएं मुहैया कराई जा रही हैं। हार्टिकल्चर के क्षेत्र में व्यावसायिक रूप से पुष्पकृषि के क्षेत्र में राज्य ने खासतौर से काफी प्रगति की है। आठवीं योजना (1992–97) के तहत जहां इसकी उपलब्धियों में मात्र 34 हेक्टेयर क्षेत्र था, वहीं नौवीं पंचवर्षीय योजनावधि (1997–2002) में 400 हेक्टेयर जमीन इसके तहत लाई गई, जहां अब पुष्प कृषि की जाती है। केंद्रीय योजना के अलावा राज्य की योजना के तहत भी यहां पिछले वर्षों में पुष्पकृषि में काफी तरक्की हुई है। सन् 1992–97 की अवधि में जहां सिर्फ 85 हेक्टेयर भूमि इसमें शामिल थी, 1997–02 में यह निर्धारित लक्ष्य के बराबर एक सौ हेक्टेयर कर लिया गया।

केंद्र सरकार की सहायता से चलने वाली योजना के तहत मसाले उगाने के लिए 1992–97 की 91 हेक्टेयर की जगह अब 400 हेक्टेयर जमीन शामिल कर ली गई है। सन् 1997–02 की अवधि में यहां एक बड़ी नर्सरी, जैविक लेबोरेट्री, टिशुकल्चर लैब, मशरूम विकास केंद्र खोलने सहित सब्जियां उगाने के लिए करीब दस हजार मिनी किटों का वितरण किया जाना राज्य के लिए एक बड़ी उपलब्धि है।

केंद्र की सहायता वाली इस योजना के तहत नगालैंड में प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी अच्छा प्रयास किया गया है। सन् 1997–02 की अवधि में मशरूम विकास हेतु करीब दो हजार किसानों को प्रशिक्षित किया गया, अंतर्राज्यीय प्रशिक्षण में 1,200 किसानों, टेक्नोलॉजी हस्तांतरण में 600 किसानों और अन्य प्रशिक्षण में 540 किसानों को शामिल किया गया। केंद्र सरकार की कृषि में प्लास्टिक के उपयोग की योजना के तहत निर्धारित लक्ष्य के बराबर एक सौ ग्रीनहाउसों का निर्माण कर लिया जाना राज्य के लिए बड़ी बात है। न्यूट्रिशनल गार्डन योजना के तहत राज्य भर में चार लाख बीज (सिडलिंग्स) वितरित किए गए।

केंद्र सरकार की सहायता से चलने वाली योजनाओं के अलावा राज्य सरकार भी प्रदेश के विभिन्न कृषि मौसमी जलवायु क्षेत्रों पर आधारित कई महत्वपूर्ण बाजारोन्मुख बागवानी फसलों का चयन कर प्रोत्साहन दे रही है।

(शेष पृष्ठ 45 पर)

सफलता की कहानी-II

जनसहयोग से जावद अस्पताल का कायाकल्प

☞ जगदीश मालवीय

उद्देश्य यदि सार्थक हो तो सहयोग जुटाना असंभव नहीं होता। लोग अपने आप एक–एककर जुड़ते जाते हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है जावद के शासकीय चिकित्सालय का कायाकल्प। अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) एवं रेडक्रास सोसायटी अध्यक्ष दीपक सक्सेना ने अपने सामान्य प्रशासनिक दायित्व से हटकर ऑपरेशन लाइफलाइन के तहत शासकीय चिकित्सालय के सौंदर्यीकरण, सुदृढ़ीकरण व सुव्यवस्थीकरण कार्य के लोकदायित्व का जिस तरह से निर्वहन किया है, वह न केवल नीमच जिले में बल्कि प्रदेश एवं देश में अनूठी मिसाल है।

लगभग सौ से अधिक वर्ष पुराना जावद का अस्पताल भवन जर्जर हो चला था। सरकारी इमारत होने से इसकी देखभाल, मरम्मत व नवनिर्माण की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। इस जरूरत को पूरा किया जावद की रोगी कल्याण समिति ने। समन्वित प्रयासों से यह अस्पताल परिसर अब किसी निजी चैरिटेबल अस्पताल जैसी भव्यता में तब्दील हो चुका है।

जिला कलेक्टर अनुपम राजन के मार्गदर्शन में एसडीएम दीपक सक्सेना द्वारा जावद के तहसील कार्यालय में शुरू की गई एकल खिड़की उज्जैन संभाग में पहला श्रेष्ठ प्रयोग है, जो सफलता से चल रहा है। रोगी कल्याण समिति द्वारा जनसहयोग से 'आपरेशन लाइफलाइन' अभियान के तहत पूरे अस्पताल के नवनिर्माण की एक रूपरेखा बनाई गई और करीब 40 लाख रुपये का प्राक्कलन तैयार करवाया। इसमें भवनों में आवश्यक निर्माण, सार्वजनिक शौचालय, स्वल्पाहार गृह, कांक्रीट मार्ग, परिसर दीवार निर्माण, वाहन पार्किंग स्थल, उपवन विकास और सौंदर्यीकरण के कार्य शामिल किए गए हैं। इस योजना के लिए प्रभारी मंत्री घनश्याम पाटीदार ने अपने वेतन में से 11 हजार रुपये की नकद राशि दी और उनकी प्रेरणा से उनके साथियों ने 50 हजार रुपये का आर्थिक सहयोग दिया।

रोगी कल्याण समिति एवं रेडक्रास के समन्वित प्रयासों से पांच माह के अल्प समय में अस्पताल के स्वरूप को देखकर सहज ही विश्वास नहीं होता कि 25 लाख रुपये के खर्च में इतना बड़ा काम कैसे हो गया! कार्य जो हुआ उसमें शामिल हैं, दो पुराने कुओं का गहरीकरण, बाह्य रोगी कक्ष, प्राइवेट वार्ड कक्ष, जनरल वार्ड कक्ष – सभी की छतों की मरम्मत, दीवारों पर नवीन प्लास्टर, कोटा स्टोन से नवीन फर्शीकरण आदि। भवनों की दीवारों पर टाइल्स लगाई गई। प्राइवेट, जनरल व बाह्य रोगीकक्ष सभी के लिए पृथक–पृथक मूत्रालय व शौचालय निर्मित किए गए। तीनों कक्षों के लिए पेयजल की पृथक पर्याप्त व्यवस्था की गई है। ऑपरेशन कक्ष व एक्स–रे कक्ष का नवीनीकरण किया गया और सुविधाजनक रसोईघर भी बनाए गए हैं। चिकित्सकों की बैठक व्यवस्था के लिए चार कक्ष व मरीजों के लिए वेटिंग हॉल का निर्माण भी कराया गया। ड्यूटी रूम भी बना दिया गया है। अस्पताल की जरूरतों के मान से 25 हजार लीटर क्षमता का जल संग्रहण टैंक भी निर्मित किया गया।

अस्पताल परिसर में एक वार्ड से दूसरे वार्ड तक पहुंचने हेतु सीमेंट–कांक्रीट सड़क का निर्माण, पोस्टमार्टम रूम से सीधे सड़क तक पहुंचने हेतु सड़क का निर्माण कराया गया। सभी भवनों में प्रकाश व्यवस्था की जा चुकी है। परिसर में आकर्षक उपवन का विकास किया गया है। नवीन चहारदीवारी बनाकर मुख्यद्वार ग्रेनाइट का बनाया गया है।

रोगी कल्याण समिति, जावद द्वारा अस्पताल के कार्यालय में अब तक 25 लाख रुपये के व्यय में शासकीय सहयोग मात्र ढाई लाख रुपये है। इनमें एक लाख रुपये कुआं गहरीकरण व डेढ़ लाख रुपये शौचालय निर्माण हेतु जनपद की मदों से प्राप्त हुआ है। रेडक्रास अध्यक्ष ने 22.50 लाख रुपये की राशि 'ऑपरेशन लाइफ लाइन' के लिए प्रतिदिन अपने संपर्क में आने वाले नागरिकों को प्रेरित कर स्वेच्छा से जुटाई है। सामान्य प्रशासन मंत्री श्री घनश्याम पाटीदार के अनुसार शासन द्वारा लाखों रुपये के खर्च से सैकड़ों काम चल रहे हैं किंतु जनभागीदारी का यह कार्य उन कार्यों से कई गुना कीमती है। जिला सरकार नीमच ने इस अस्पताल का नामकरण 'राजीव गांधी मेमोरियल हॉस्पिटल जावद' किया है। ❑

जिला जनसंपर्क कार्यालय
132, विकास नगर, नीमच (म.प्र.)

सही दिशा

☞ डा. नीना कनौजिया

'रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीता राम' ये धुन मेरी कालबेल की थी, जिसे सुनते ही मैंने अपनी कामवाली को आवाज दी – "दुलारी, जरा दरवाजा तो खोलना।" कमरे से बाहर आई तो मैंने देखा कि डा. रेखा थीं।

मैं उन्हें अपने ड्रांइगरूम में ले आई। शायद वो जल्दी में थीं, इसलिए बोली–'मैं तुमसे बस इतना पूछने आई थी कि क्या तुम संडे को 'फ्री' हो?'

मैंने पूछा– 'पर बात क्या है?'

तब उन्होंने विस्तार से बताया – 'मेरे बच्चे बड़े हो गए हैं।' मैं एक सरकारी अस्पताल में डाक्टर हूं इसलिए संडे को फ्री रहती हूं तो मैंने सोचा कि क्यों न संडे को 3–4 घंटे निकाले जाएं और उनका इस्तेमाल गांव के लोगों के लिए किया जाए तो कितना अच्छा हो। चूंकि तुम भी एक डाक्टर हो तो इसलिए मैंने तुमसे पूछा कि एक से दो भले। कुछ समाजसेवा भी होगी और ग्रामीण लोग, जो अपने स्वास्थ्य के सत्य से अनिभिज्ञ हैं, उन्हें सही दिशा भी मिल जाएगी। मैं तो बहुत खुश हुई क्योंकि मुझे भी कुछ ऐसा ही करने की चाह थी और मैंने तुरंत 'हां' कर दी।

डा. रेखा बोलीं– 'अच्छा तो हम लोगों का उद्देश्य ही होगा सही दिशा में सबको ले जाना। अच्छा, संडे को तैयार रहना' और ये कहकर वो चली गईं।

मुझे तो बस संडे का इंतजार था। संडे को हम लोग 9 बजे वहां पहुंचे। चूंकि डा. रेखा की वहां के मुखिया से पहले ही बात हो चुकी थी इसलिए सब कुछ व्यवस्थित था।

नीम के पेड़ के नीचे एक टेबल लगा था जिस पर सफेद चादर बिछी हुई थी। कुर्सियां भी लगी थीं। उनके चारों तरफ जमीन पर पानी छिड़का हुआ था।

हम लोग जाकर कुर्सियों पर बैठ गए। तभी धोती–कुर्त्ता पहने, एक अधेड़–सा व्यक्ति दो गिलास पानी लेकर आया। उसने हम लोगों को नमस्ते कहा और फिर कहने लगा–

'डाक्टरनी साहिबा, आप पहचानी हमें! 'तो डा. रेखा उसे बड़े ध्यान से देखने लगीं। अरे हम वही हैं, जो अपनी बिटिया पूजा को लेकर आपके अस्पताल आए रहे, बुखार में तप रही थी। बड़ी जिद्दी है। चार दिन से खाना नहीं खाई थी, पढ़ाई जो छुड़ाने के लिए कहे थे। रो–रोकर पूरा घर सिर पर उठा ली थी, आखिर अस्पताल ले जाना पड़ा था। तभी तो आप समझाई थीं कि जब वो पढ़ना चाहती है तो क्यों उसकी पढ़ाई छुड़ाना चाहते हो। क्या पता पढ़–लिखकर कुछ बन जाए और तुम्हारे ही गांव की उन्नति करे।

'सही में डाक्टरनी साहिबा हम अपनी बिटिया को पहचान नहीं पाए, पूरे गांव में सबसे ज्यादा नंबर हैं उसके हाई स्कूल परीक्षा में। अब तो पढ़ाई के लिए पैसा भी नहीं देना पड़ेगा। यदि आप सही दिशा न दिखातीं तो वो भी और लड़कियों जैसे गोबर पाथती रह जाती।'

धीरे–धीरे गांव के लोग इकट्ठा होने लगे।

तभी एक दुबली–पतली सी लड़की, जो एक चादर के टुकड़े में लिपटी अपनी नन्ही–सी जान को सीने से लगाए हुई थी, पर डा. रेखा की नजर पड़ी। उसे देखते ही उन्होंने कहा– 'अरे रीता, तुम कैसी हो? और तुम्हारा बच्चा तो ठीक है न अब।'

उसके कदम तेज हो गए और उनके पास आकर रुक गई। उसने उनके पैर छुए और रुआंसे स्वर में बोली– 'डा. साहिबा। आपने हम मां–बेटे को बचा लिया नहीं तो ...'और इतना कहकर अपने साड़ी के पल्ले से आंख रगड़ने लगी।

डा. रेखा थोड़ा नाराज स्वर में बोलीं – 'क्या कहूं, तुम लोग अपना ध्यान नहीं रखते हो और एक तुम्हारे माता–पिता जो कच्ची उम्र में ही तुम लोगों की शादी कर देते हैं, जो शादी के लिए न तो दिमाग से तैयार होते हैं और न ही शरीर से। अच्छा, अपने बच्चे का ध्यान रखना। उसे समय–समय से और सफाई से दूध पिलाते रहना। चार महीने अपना ही दूध पिलाओ तो तुम्हारे और बच्चे, दोनों के लिए फायदेमंद रहेगा। चार महीने के बाद अपने दूध के साथ–साथ दाल का पानी, साबूदाने का पानी, गाय या बकरी का दूध जो एकदम शुद्ध न हो, पिलाओ; थोड़ा पानी मिलाकर दूध को पतला कर लेना चाहिए। पानी भी उबालकर मिलाना चाहिए।

स्तनपान कराने से पहले व बाद में स्तन

को साफ जरूर कर लेना चाहिए और सुखा लेना चाहिए। बच्चे को लेटकर दूध नहीं पिलाना चाहिए। नहीं तो दूध कान में जा सकता है जो कान के लिए हानिकारक है। यदि पिलाना हो तो बैठकर पिलाओ और सिर के नीचे हाथ लगाकर स्तनपान कराना चाहिए। 'तभी रीता बोली 'डा. साहिबा, मेरे स्तनपान कराने पर भी इसका पेट नहीं भरता।' डा. रेखा, थोड़ा गुस्सा होकर बोलीं, 'एक तो तुमने इतनी जल्दी बच्चा पैदा किया और अब दूसरी गलती कर रही हो। तुम्हें अपने खानपान पर विशेष ध्यान देना चाहिए।' प्रोटीन एवं ताकत वाली चीजों का सेवन करना चाहिए जैसे दाल, दूध, दही, चने, साग, गुड़, गन्ना, अंडा, मीट, मछली, सोयाबीन, अंकुरित दालें, गेहूं, प्रोटीन पाउडर फल–सब्जियों का अधिक मात्रा में सेवन करना चाहिए जिससे तुम अपने भी स्वास्थ्य का ध्यान रख पाओगी और बच्चे का भी पेट भर पाओगी।

दूध तो दिनभर में एक लीटर पियो क्योंकि दूध में प्रोटीन, विटामिन और कैल्शियम होता है। यदि ऐसा नहीं करोगी तो कैल्शियम की कमी से तुम्हारी हड्डियों जैसे हाथ, पैर व कमर में दर्द हो सकता है।

हां, एक और बात, जो बहुत महत्वपूर्ण है। बच्चे को स्तनपान कराने के कई फायदे होते हैं एक तो स्त्री जल्दी गर्भवती नहीं होती। दूसरा, इससे गर्भाशय और प्रजनन अंगों को भी अपनी यथास्थिति में पहुंचने में मदद मिलती है।

हां, भारी चीजों को मत उठाना, ज्यादा थकान वाले काम मत करना क्योंकि प्रजनन अंगों पर जोर पड़ता है। परंतु एकदम लेटे रहने की जरूरत नहीं है। हल्के–फुल्के व्यायाम करने से पुनरोत्पादक अंगों एवं बड़े हुए उदर को घटाकर गर्भावस्था के पूर्व की स्थिति में लाने में सहायता मिलती है।

यदि दूसरे बच्चे को जन्म देना है तो जल्दी मत करना। जब बच्चा दूध पीना छोड़ दे तो गर्भनिरोधक गोलियां ले सकती हो तब तक सरकारी अस्पतालों में कॉपर टी वगैरह जैसे कई तरह के गर्भनिरोधक मुफ्त दिए जाते हैं। समय–समय पर अपनी जांच जरूर कराती रहना और इन साधनों का उपयोग करना। दो बच्चों के बीच अंतर रखने से तुम पहले बच्चे की देखरेख भी ठीक से कर पाओगी और तुम्हारा स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा। परिवार नियोजन के बारे में भी सोचो। अपनी जांच के साथ–साथ बच्चे को सही समय से टीका जरूर लगवाना जैसे–

बी.सी.जी. का टीका– जन्म से एक माह तक में

डी.पी.टी. का टीका

- पहला टीका–1½माह में
- दूसरा टीका– 2½ माह में
- तीसरा टीका– 3½ माह में
- बूस्टर डोस – 16 से 24 माह में

पोलियो की खुराक

- पहली खुराक– 1½ माह में
- दूसरी खुराक– 2½ माह में
- तीसरी खुराक– 3½ माह में
- बूस्टर खुराक– 16 से 24 माह में

खसरे का टीका – 9 माह में

डी.टी. – 5 वर्ष में

टी.टी. – 10–16 वर्ष में

इसके अतिरिक्त 'हिपेटाइटिस बी' का टीका भी जरूर लगवाना चाहिए। यदि बच्चे को सर्दी–जुकाम हो या बुखार हो तो टीका कुछ दिनों बाद ठीक होने पर लगवाना चाहिए।

तभी इमरती बोली – 'डा. साहिबा, हमारे भोले को तो टीका लगवाने के बाद बुखार आ गया था।'

''इसमें घबराने की जरूरत नहीं है, वो अपने आप ठीक हो जाएगा।''

डाक्टर रेखा ने कहा–'रीता, आयरन और कैल्शियम की गोली लेती रहना क्योंकि तुम्हारे अंदर खून की कमी है।'

'डा. साहिबा, आयरन का कैप्सूल खाने से मेरा पेट साफ नहीं होता। कब्जियत–सी बनी रहती है।' रीता बोली।

तो कोई बात नहीं, तुम अनार का जूस तो पी नहीं पाओगी, उसकी जगह खूब साग खाओ। गुड़–चने खाओ। हो सके तो लोहे की कढ़ाई में सब्जी बनाओ जिससे कुछ तो आयरन तुम्हारे शरीर में जाए। पानी का सेवन भी करती रहो जिससे कब्जियत न होने पाए।

अच्छा, अब मैं चलती हूं। बाकी बातें अगले संडे को होंगी और इतना कह हम सब वहां से चल दिए। ❑

49/14 बैंग्लोरोड
कमला नगर
दिल्ली – 110007

(पृष्ठ 42 का शेष) **हार्टिकल्चर...**

खासकर पुष्पकृषि और मशरूम विकास के क्षेत्र में राज्य ने पिछले वर्षों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन किया है। मशरूम विकास के क्षेत्र में बढ़ोत्तरी तीन हजार स्पॉन बोटल्स से बढ़कर 40 हजार स्पॉन बोटल्स हो गई है। नगालैंड में मशरूम उत्पादन के प्रति लोगों में आकर्षण काफी बढ़ा है। खासकर महिलाओं और युवाओं में काफी उत्साह है। गत वर्ष मशरूम विकास के लिए आयोजित प्रशिक्षण में शामिल 450 किसानों में अधिसंख्य युवा व महिलाएं थीं। ओलेरीकल्चर के क्षेत्र में प्रगति 190 हेक्टेयर से बढ़कर 7,100 हेक्टेयर भूमि तक पहुंच जाना राज्य के लिए एक बड़ी उपलब्धि है। गत वर्ष राज्य ने इस क्षेत्र में सात लाख रुपये खर्च कर उन्नत सब्जियों के बीज किसानों में बांटें। प्रशिक्षण के मामले में राज्य ने आठ हजार लोगों को प्रशिक्षित किया।

वर्ष 2001–02 में राज्य के हार्टिकल्चर विभाग ने 65 आदर्श परियोजनाओं का चयन कर करीब पांच हजार किसानों को फायदा पहुंचाया। इन परियोजनाओं के तहत विभिन्न फसलें उगाई जाने वाली 650 हेक्टेयर जमीन है। नगालैंड राज्य के इस विभाग ने इलायची उपजाने के लिए भी कुल 70 हेक्टेयर जमीन में 7 आदर्श प्रोजेक्टों के विकास में सात लाख रुपये खर्च किए।

हालांकि पिछले दस वर्षों में नगालैंड ने हार्टिकल्चर के क्षेत्र में काफी प्रगति की है, लेकिन बागवानी कृषि के इन प्रगति वाले क्षेत्रों व कई अन्य क्षेत्रों में अभी भी इसकी उपलब्धियां कई जगह निर्धारित लक्ष्य से कम ही हैं। पिछले दिनों ही केंद्र सरकार के कृषि मंत्रालय ने पूर्वोत्तर क्षेत्र में बागवानी कृषि के विकास के उद्देश्य से कोल्ड स्टोरेज की सुविधा, उपज के बाद रखरखाव और बाजार आदि की सुविधा मुहैया कराने के लिए समूचे क्षेत्र के लिए 585 करोड़ रुपये जारी करने की घोषणा की है। उम्मीद है इस सहायता से नगालैंड बागवानी कृषि में और अधिक प्रगति कर पाएगा। ❑

ए.आई.आर, कोहिमा,
नगालैंड–797001

कब्ज की रामबाण औषधि इसबगोल

☞ कैलाश जैन

हमारी प्राचीन चिकित्सा पद्धति मूलतः प्राकृतिक पदार्थों और जड़ी–बूटियों पर आधारित थी। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में साध्य–असाध्य रोगों का इलाज प्रकृतिप्रदत्त वनस्पतियों के माध्यम से सफलतापूर्वक किया जाता था। समय की धुंध के साथ हम कई प्राकृतिक औषधियों को भुला बैठे। 'इसबगोल' जैसी चमत्कारी प्राकृतिक औषधि भी उन्हीं में से एक है। हमारे वैदिक साहित्य और प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथों में इसका उल्लेख मिलता है। संस्कृत साहित्य में इसे 'स्निग्धबीजम्' नाम से संबोधित किया गया है।

पर्याप्त जानकारी और ज्ञान के अभाव में शनैः शनैः हमारे देश में चिकित्सा पद्धति के अंतर्गत इसबगोल का इस्तेमाल कम होता गया। दुनिया की तकरीबन हर प्रकार की चिकित्सा पद्धति में इसबगोल का उपयोग बतौर औषधि किया गया है। अरबी और फारसी चिकित्सकों द्वारा इसके इस्तेमाल के प्रमाण मिलते हैं। दसवीं सदी में फारस के मशहूर हकीम अलहेखी और अरबी हकीम अविसेन्ना ने इसबगोल द्वारा चिकित्सा के संबंध में व्यापक प्रयोग व अनुसंधान किए। 'इसबगोल' मूलतः फारसी शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है, पेट को ठंडा करने वाला पदार्थ।

इसबगोल पश्चिम एशियाई मूल का पौधा है। यह तनारहित एक झाड़ीनुमा पौधा है, जिसकी अधिकतम ऊंचाई ढाई से तीन फुट तक होती है। इसके पत्ते महीन होते हैं तथा इसकी टहनियों के सिरे पर गेहूं की तरह बालियां लगती हैं तथा फूल आते हैं। फूलों में नाव के आकार के बीज होते हैं। इसके बीजों पर सफेद व पतली झिल्ली होती है। यह झिल्ली ही दरअसल इसबगोल की भूसी कहलाती है। बीजों से भूसी निकालने का कार्य हाथ से चलाई जाने वाली चक्कियों और मशीनों से किया जाता है। इसी भूसी का सर्वाधिक औषधीय महत्व है।

इसबगोल की बुआई शीतऋतु के प्रारंभ में की जाती है। इसकी बुआई के लिए पर्याप्त नमी वाली जमीन होना आवश्यक है। आमतौर पर यह क्यारियां बनाकर बोया जाता है। बीज के अंकुरित होने में करीब 7 से 10 दिन लगते हैं। इसबगोल के पौधों की बढ़त बहुत ही मंदगति से होती है।

इसबगोल के औषधीय महत्व को प्रायः प्रत्येक चिकित्सा पद्धति में स्वीकार किया गया है। यूनानी चिकित्सा पद्धति में इसके बीजों को शीतल, शांतिदायक, मलावरोध को दूर करने वाला तथा अतिसार, पेचिश और आंत के जख्म आदि रोगों में उपयोगी बताया गया है। नियमित रूप से इसबगोल का सेवन करने से श्वसन रोगों तथा दमे में बहुत राहत मिलती है। अठारहवीं शताब्दी के प्रतिभाशाली चिकित्सा विज्ञानी फ्लेमिंग व राक्सवर्ग ने भी अतिसार रोग के उपचार के लिए इसबगोल को रामबाण औषधि बताया। रासायनिक संरचना के अनुसार इसबगोल के बीजों व भूसी में 30 प्रतिशत तक 'म्यूसिलेज' नामक तत्व पाया जाता है। म्यूसिलेज की इस प्रचुर मात्रा के कारण इसके बीजों में बीस गुना पानी मिलने पर भी यह एक स्वादरहित जैली के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इसके अलावा इसबगोल में 14.7 प्रतिशत एक प्रकार का अम्लीय तेल होता है, जिसमें खून के कोलेस्ट्रोल को घटाने की क्षमता होती है।

आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में भी दिनोंदिन इसबगोल का महत्व बढ़ता जा रहा है। पाचन– तंत्र से संबंधित रोगों की औषधियों में इसका इस्तेमाल हो रहा है। अतिसार, पेचिश जैसे उदर रोगों में इसबगोल की भूसी का इस्तेमाल न केवल लाभप्रद है बल्कि यह पश्चातवर्ती दुष्प्रभावों से भी मुक्त है। भोजन में रेशेदार पदार्थों के अभाव के कारण कब्ज जैसी बीमारी हो जाना आजकल सामान्य बात है और अधिकांश लोग इससे पीड़ित हैं। आहार में रेशेदार पदार्थों की कमी को नियमित रूप से इसबगोल की भूसी का सेवन कर दूर किया जा सकता है। यह पेट में पानी सोखकर फूलती है और आंतों में उपस्थित पदार्थों का आकार बढ़ाती है। इससे आंतें अधिक सक्रिय होकर कार्य करने लगती हैं और पचे हुए पदार्थों को आगे बढ़ाती हैं। यह भूसी शरीर के टाक्सिंस और बेक्टीरिया को भी सोखकर शरीर से बाहर निकाल देती है।

इसबगोल की भूसी तथा इसके बीज दोनों ही विभिन्न रोगों में एक प्रभावी औषधि का कार्य करते हैं। इसके बीजों को शीतल जल में भिगोकर उसके अवलेह को छानकर पीने से खूनी बवासीर में लाभ मिलता है। नाक से खून निकलने की स्थिति में इसके बीजों को सिरके के साथ पीसकर कनपटी पर लेप करना चाहिए। कब्ज के अतिरिक्त दस्त, आंव, पेटदर्द आदि में भी इसबगोल की भूसी लेना लाभप्रद रहता है। अत्यधिक कफ की स्थिति में इसबगोल के बीजों का काढ़ा बनाकर रोगी को दिया जाता है।

इसबगोल के बीजों को इस्तेमाल करने से पूर्व भली प्रकार साफ कर लिया जाना चाहिए। तत्पश्चात इन्हें धोकर सुखा लें। भूसी को सीधे भी दूध या पानी के साथ लिया जा सकता है अथवा एक कप पानी में एक तोला भूसी और कुछ शक्कर डालकर जैली तैयार कर लें तथा इसका सेवन करें। सामान्यतः इसबगोल की भूसी और बीजों का उपयोग रात में सोते समय किया जाता है। किंतु आवश्यकतानुसार इन्हें दिन में दो या तीन बार भी लिया जा सकता है। इसबगोल पाचन संचयन संबंधी रोगों की लोकप्रिय औषधि होने के अलावा रंगरोगन, आइसक्रीम तथा चिकने पदार्थों के बनाने में भी प्रयुक्त होती है। आजकल तो औषधीय गुणों से युक्त इसबगोल की भूसी से गर्भ–निरोधक गोलियां भी बनने लगी हैं। ❑

34, बंदा रोड, भवानीमंडी–326502
जिला–झालावाड़ (राज.)।

डिप्रेशन : इलाज की दिशा में एक कदम

☞ हर्षदेव

हमारी धारणा और अनुभूतियां हमारे व्यक्तित्व के अनुसार बनती–ढलती हैं। इस तथ्य का महाभारत की एक कथा बड़े सरल ढंग से खुलासा करती है – 'एक दिन कृष्ण ने पांडवों में सबसे बुद्धिमान युवराज युधिष्ठिर से कहा कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को ढूंढ़कर लाएं जो सिर्फ बुरा हो। इसी तरह उन्होंने कौरव युवराज दुर्योधन से भी कहा कि वह ऐसा व्यक्ति तलाश करें जिसमें केवल गुण ही गुण हों। दोनों युवराज काफी दिन तक अपने–अपने राज्य में ऐसे व्यक्ति की खोजबीन करते रहे। लेकिन वे दोनों कृष्ण के पास खाली हाथ लौट आए। न तो बुद्धिमान युवराज को ऐसा व्यक्ति मिला जो सिर्फ बुरा हो और न अहंकारी दुर्योधन किसी ऐसे मनुष्य की तलाश कर सका जो केवल सदगुणी हो।'

इस कथा का मानवीय संदेश इतना ही है कि सुंदरता व गुण (या खलनायकत्व) देखने वाले की आंख (या फिर मन) में रहते हैं। इस तथ्य की पुष्टि हाल में तीन मनोवैज्ञानिकों के एक दल द्वारा किए गए शोध से भी होती है। स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में यह अनुसंधान कार्य तुरहान कैनली, जॉन गैब्रियली और उनके सहयोगी ने संपन्न किया।

मस्तिष्क की गतिविधि को मापने के लिए एमआरआई (मैगनेटिक रेजोनेंस इमेजिंग) तकनीक का उपयोग करते हुए इन मनोवैज्ञानिकों ने पाया कि विभिन्न वातावरणों में हमारा मस्तिष्क हमारे भीतर मौजूद व्यक्तित्व के अनुरूप प्रतिक्रिया करता है। यदि कोई एक व्यक्ति भौतिकवादी है और दूसरा भावुक है तो एक ही संवेग उनमें अलग–अलग तरह की प्रतिक्रिया पैदा करता है।

इस अनुसंधान के दौरान 14 महिलाओं से ऐसे दृश्य देखने के लिए कहा गया जो बहुत गंभीर सकारात्मक या नकारात्मक संवेग पैदा करने वाले थे और इस दौरान उनके मस्तिष्क का एमआरआई भी किया जाता रहा। ये दृश्य पांच खंडों में दिखाए गए। इनमें से हर एक में चार नकारात्मक (रोते या गुस्सा करते हुए लोग, मकड़ियां, बंदूकें व कब्रिस्तान) और चार ही सकारात्मक (खुशी मनाते जोड़े, प्यारे कुत्ते, सुंदर आभा बिखेरता सूर्यास्त और सबको पसंद आने वाली आइसक्रीम या अन्य प्रिय खाद्य) छवियां प्रस्तुत की गईं। यह प्रयोग करते हुए प्रतिभागी की प्रतिक्रिया अथवा उसकी आशावादिता और सामाजिक चिंता, असुरक्षा तथा बेचैनी की प्रवृत्ति का पता लगाने के लिए शोधकर्ताओं ने उसके व्यक्तित्व का आकलन भी किया।

एमआरआई के नतीजों से यह संकेत मिला कि ज्यादा मुखर महिलाओं में, अंतर्मुखी महिलाओं द्वारा नकारात्मक दृश्यों को देखे जाने की तुलना में, सकारात्मक दृश्यों को देखकर अधिक सक्रिय प्रतिक्रिया हुई। सकारात्मक दृश्यों से उत्पन्न होने वाले बहिर्मुखी संवेगों और स्नायुतंत्रों के मध्य भी परस्पर संबंध देखा गया। इस प्रतिक्रिया के दौरान मस्तिष्क के उन अनेक भागों में सक्रियता में वृद्धि देखी गई जिनका संबंध भावना से होता है। इसी प्रकार नकारात्मक संवेगों का मानसिक विकृतियों के रूप में प्रभाव दिखाई दिया। हालांकि यह मस्तिष्क के कुछेक अंगों में ही होता दिखाई दिया।

इन प्रयोगों के उपरांत शोधकर्ताओं का निष्कर्ष यह रहा कि व्यक्तिगत अनुभवों के कुछ पहलुओं का प्रभाव विभिन्न व्यक्तियों के मस्तिष्क पर उनके व्यक्तित्व के अनुरूप होता है। डा. गैब्रियली बताते हैं, "सभी प्रतिभागियों ने सकारात्मक और नकारात्मक दृश्य देखे किंतु उनकी प्रतिक्रियाएं एकदम भिन्न थीं। कुछ ने कप को बहुत भरा हुआ देखा तो दूसरों को वह बहुत खाली महसूस हुआ।"

अन्य विशेषज्ञों का मत भी यही है कि मनुष्य के व्यक्तित्व और भावनात्मक धरातल के मध्य गहरा संबंध है और यह शोधकार्य उस तथ्य की खोज की दिशा में पहला कदम है। उनका मानना है कि इस प्रयोग के फलस्वरूप भावनाओं के मामले में शोध करने में सहायता मिलेगी और उसके अनुसंधान के लिए एक नए और सुगम तरीके को अपनाया जा सकेगा। "भावनात्मक प्रतिक्रिया पूरी तरह व्यक्तिगत होती है और उस वैयक्तिकता को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि उस व्यक्ति का मस्तिष्क भावनाओं के प्रति व्यावहारिक और सैद्धांतिक रूप में किस प्रकार की प्रतिक्रिया करता है।" विशेषज्ञों का कहना है कि स्नायुओं की भावनात्मक घटनाओं और दृश्यों के प्रति प्रतिक्रिया में व्यक्तित्व के कारण भिन्नता होती है इसलिए अवसाद (डिप्रेशन) और चिंता जैसी भावनात्मक समस्याओं के इलाज के काम में इस अनुसंधान से उपयोगी सहायता हासिल हो सकती है।

इस प्रकार का शोध अभी पुरुषों पर किया जाना बाकी है। स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ता अभी कई और प्रकार के प्रयोग कर रहे हैं जिनमें संवेगात्मक अनुभव को मापना, भावात्मक स्मृतियों को पुनः जीवंत बनाना और संवेग जगाने वाले दृश्यों को देखते हुए पुरानी स्मृति को सुरक्षित रखने के प्रयोग शामिल हैं। डा. कैनली के अनुसार, "हम एक ऐसे पथ की ओर बढ़ चले हैं जो हमें हमारे कार्य करने के तौरतरीकों जैसे एकाग्रता, अनुभव, याददाश्त और धारणा आदि को संस्कारित करने वाली भावनाओं के आधार पर अर्थात व्यक्तित्व के अध्ययन की प्रगति को संभव बनाएगा।" ❑

193–आकाशदर्शन अपार्टमेंट,
मयूर विहार–I,
दिल्ली–110091

शब्द–संवाद : एक समीक्षा

डा. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर

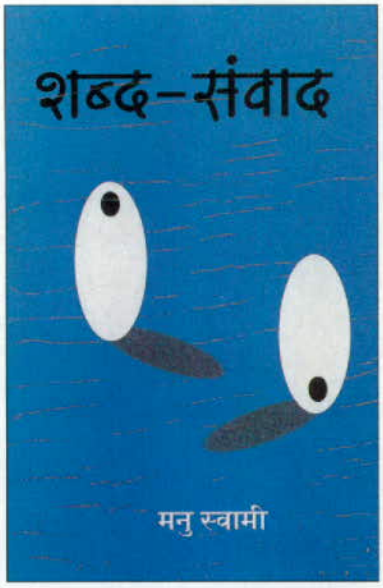

कविता संग्रह : शब्द–संवाद;
कवि : मनु स्वामी;
प्रकाशक : कुसुम प्रकाशन, आदर्श कॉलोनी, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.); मूल्य : 100 रुपये; पृष्ठ सं. 88

हर सहृदय के मन में कविता का स्रोत होता है। किसी–किसी के मन से वह निरंतर निकलती है तभी वह समाज में कवि के रूप में समाहत होता है। मनु स्वामी अब कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके हैं। उन्होंने अपने कविता संग्रह *दीवार में पीपल* के माध्यम से अपने यथार्थ कवित्व का प्रमाण दिया था जिसे विद्वतजनों ने सराहा। *शब्द–संवाद* उनका दूसरा कविता संग्रह है। उनको रचनाकाल में अनेक नए तत्व सीखने को मिले हैं। इनसे प्रेरित मनु स्वामी ने *शब्द–संवाद* भेंट किया है।

कविता की कितनी ही परिभाषाएं मिलती हैं। मैंने अनुभव किया है कि प्रत्येक भावपूर्ण कविता में कवि के हृदय से भावों की छोटी–छोटी लहरियां निकलती हैं जो कल्पना से रंजित हैं। कल्पना नहीं तो कविता नहीं है। मनु स्वामी के कल्पनाशील मन ने शब्द को लेकर कितने ही बिंब व प्रसंग सृजित किए हैं। ये विचारपूर्ण तो हैं ही, साथ ही कुछ उत्तम सूक्तियां–सी सिद्ध होते हैं। उदाहरणार्थ–

- "अचानक एक दिन/आकाश से शब्द/ उतरने लगते हैं और/जिल्दों में कैद होकर/विशिष्ट बन जाते हैं/तो कहीं पिघला सीसा बन/तुल जाते हैं/जीना दूभर करने को।" (पृ. 8)
- "शब्द/और/स्नेहिल/लिपि का/ समागम/करता है सर्जन/कालजई/ रचना का।" (पृ. 22)

शब्द की महिमा के वर्णन के बहाने कवि ने रामायण, महाभारत और वर्तमान राष्ट्रीय क्षेत्र आदि विभिन्न प्रसंग प्रस्तुत किए हैं। सुभाष चंद्र बोस के संदेश का भी अवतरण दिया है –

"झुक सकते हैं मगर/टूट नहीं सकते/ को नकार/तुम मुझे खून दो/ मैं तुम्हें आजादी दूंगा/ का उद्घोष /कर देते हैं/सेनानी शब्द।" (पृ. 34)

इकतालीस शब्द–कविताओं के बाद महाभारत के चुने हुए प्रसंगों की प्रस्तुति है इनमें, आवृत्ति नहीं। कवि ने ऐसे संवादों की कल्पना की है जो हो सकते थे, पर महाभारत में नहीं मिलते। "द्रौपदी–अर्जुन संवाद," "शकुनी–कृष्ण संवाद" आदि इसके उदाहरण हैं। इन कविताओं में आधुनिक चिंतन की झलक भी मिलती है।

महाभारत पर आश्रित कविताओं के पश्चात् चुनी हुई विविध विषयक कविताएं हैं। इनसे प्रकट है कि कवि अनेक विषयों पर विचार करता है। प्रत्येक कविता भावपूर्ण है। फिर भी मुझे 'आंखें' और 'ननिहाल' कविताएं अधिक सरस लगीं। इनमें कवि ने कई शब्दचित्र खींचे हैं। जैसे –

"आंगन में चूल्हे पर तमतमाए चेहरे
मंद मुस्कान लिए
मामीजी की हथेलियों से गूंजते संगीत के
साथ असली घी में चुपड़ी
करारी रोटियों का स्वाद
आज भी मुंह में पानी ले आता है।" (पृ.68)

आंखों के चित्रण में मीरा की कहानी भी प्रसंगवश आती है –

"आंखों में जब कोई चुंबकीय चेहरा
घर बना लेता है तो
कोई महारानी
कहां रह जाती है महारानी
जहर का प्याला पीकर
किवंदती बन जाती है।" (पृ. 73)

हिंदी जगत में "शब्द–संवाद" का आमतौर पर स्वागत होगा, ऐसा प्रतीत होता है।❑

26, कालेज लेन,
तिरुवनंतपुरम–695001 (केरल)

समीक्षा हेतु पुस्तकें आमंत्रित

कुरुक्षेत्र पत्रिका के पुस्तक चर्चा कॉलम के लिए साहित्यिक प्रकाशन – कहानी, कविताओं सहित ग्रामीण विकास से जुड़े मुद्दों पर प्रकाशित नई पुस्तकें/कृतियां समीक्षा के लिए आमंत्रित हैं। कृपया पुस्तकों की दो प्रतियां भेजें। पुस्तकों की प्राप्ति सूचना प्रकाशित की जाएगी।

किसान चैनल और किसान कॉलसेंटर शुरू

किसान टी.वी. चैनल और किसान कॉलसेंटरों का 21 जनवरी को प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने नई दिल्ली में उद्घाटन किया। किसान टी.वी. चैनल का मुख्य उद्देश्य कृषि संबंधित जानकारी, देश में उपलब्ध जनसंचार माध्यमों द्वारा किसानों तक पहुंचाना है। राष्ट्रीय प्रसारण के लिए यह केबल उपग्रह चैनल इन्सैट का ट्रांसपोंडर प्रयोग में लाएगा। इस वर्ष इस चैनल द्वारा प्रतिदिन एक घंटे का कार्यक्रम प्रसारित होगा जोकि दिन मे चार बार पुनः प्रसारित किया जाएगा। दसवीं योजना के अंतिम वर्ष में इन प्रसारणों को दो घंटे तक बढ़ाया जाएगा जिनका दिन में चार बार पुनः प्रसारण होगा। निर्दिष्ट क्षेत्रों में प्रसारण के लिए दूरदर्शन के कम क्षमता और उच्च क्षमता वाले ट्रांसमीटरों का प्रयोग किया जाएगा। इन ट्रांसमीटरों द्वारा देश के 89 प्रतिशत भाग में कार्यक्रमों को देखा जा सकता है। इनके जरिए स्थानीय स्तर की जरूरतों को पूरा करने वाले कार्यक्रम स्थानीय भाषा में दिखाए जाएंगे। इनके साथ ही स्थानीय भाषा में खेती से संबंधित जानकारी देने वाले कार्यक्रमों के प्रसारण के लिए आकाशवाणी के 96 एफएम स्टेशनों का उपयोग किया जाएगा। दसवीं योजना में इसके तहत 50 फीसदी ग्रामीण जनसंख्या को कवर किया जाएगा। एफएम रेडियो की शुरुआत अगले माह से की जाएगी। किसान कॉलसेंटरों के लिए देश के आठ केंद्रों की पहचान की गई है।

राज्यों में स्थापित इन किसान कॉलसेंटरों से किसान अपने प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर सकेंगे। ये केंद्र 'टॉल–फ्री' लाइनों द्वारा काम करेंगे। 1551 डॉयल करके किसान कॉलसेंटर से संपर्क स्थापित कर सकते हैं जहां कृषि स्नातक उनके प्रश्नों के उत्तर देंगे। अगर वे किसान के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते हैं तो उसकी कॉल विशेषज्ञों तक पहुंचा दी जाएगी। ये किसान कॉलसेंटर सप्ताह पर्यंत 24 घंटे काम करेंगे। देशभर में कहीं से भी इस नंबर पर निशुल्क फोन किया जा सकेगा। किसानों को जानकारी स्थानीय भाषा में मिलेगी और उनकी कॉल क्षेत्र के आधार पर संबंधित भाषा में जानकारी देने वाले केंद्र पर ही जाएगी। फिलहाल बंगलौर, हैदराबाद, चैन्नई, चंडीगढ़, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई और कानपुर में इनको खोला जाएगा। अगले चरण में इनकी संख्या बढ़ा दी जाएगी।

सरकार द्वारा प्रत्यक्ष कर प्रक्रिया का सरलीकरण

प्रत्यक्ष कर से संबंधित प्रक्रियाओं को और सरल बनाने के लिए सरकार ने नियमों में संशोधन कर कुछ जरूरी अधिसूचनाएं जारी की हैं। ये निम्नलिखित हैं –

- 1,50,000 रुपये की सालाना आमदनी वाले ऐसे कर्मचारियों को रिटर्न दाखिल नहीं करनी होगी जिनके मामले में दिए जाने वाला पूरा कर नियोक्ता द्वारा स्रोत पर ही काट लिया जाता हो। नियोक्ता द्वारा आयकर विभाग को भेजे गए वेतन प्रमाणपत्र को ही रिटर्न मान लिया जाएगा।
- पेंशनधारियों को 1/6 योजना के दायरे से छूट होगी। इस प्रकार छूट पाए ऐसे पेंशनधारी, जिनकी आमदनी करयोग्य नहीं होगी, उन्हें आयकर रिटर्न भरने से छूट प्राप्त होगी।
- परिलब्धियों के आकलन के लिए गृह ऋण आदि की ब्याज दरें घटाई जाएंगी और उन्हें मौजूदा मार्किट दरों के समकक्ष लाया जाएगा।
- कई कटौतीकर्ताओं को अलग–अलग प्रमाणपत्र देने की बजाए, ट्रस्ट आदि जैसे निकायों को कर छूट के मामले में स्रोत पर कर न काटने के लिए आकलन अधिकारी से केवल एक प्रमाणपत्र ही लेना होगा।
- आधारभूत संरचना वाली परियोजनाओं के लिए समय–समय पर नवीकरण लेने की मौजूदा प्रणाली के स्थान पर धारा 10 (23 जी) के तहत छूट के लिए एक बार अनुमोदन दिया जाएगा। ये व्यवस्थाएं अगले वित्त वर्ष अर्थात पहली अप्रैल, 2004 से लागू हो जाएंगी।

करदाता की अनुकूल व्यवस्था के लिए कुछ प्रशासनिक उपाय भी प्रस्तावित हैं। ये हैं–

- वेतनभोगी करदाताओं और डाक्टर, लेखाकार आदि जैसे व्यावसायिकों के लिए डिजीटल हस्ताक्षरों के तहत इंटरनेट के जरिए सीधी रिटर्न फाइल करने की सुविधा शुरू की जाएगी, जिससे कागजरहित रिटर्न की व्यवस्था हो सकेगी।
- कंप्यूटर नेटवर्क का दायरा बढ़ाया जाएगा और जून, 2004 तक देश में सभी 501 आयकर कार्यालयों को इसके तहत लाया जाएगा।
- स्रोत पर कर की कटौती के लिए चालान फार्मों की संख्या घटाई जाएगी।

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003-05
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) -55/2003-5

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL 12057/2003-05
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-05
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

श्री उमाकांत मिश्र, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया-II, नई दिल्ली-20 : सहायक संपादक : ललिता खुराना